चन्दामामा

जून १९६६

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ०-७५ पैसे वार्षिक चन्दा रु. ८-४० पैसे

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नये पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक

चन्दामामा प्रकाशन

वडपलनी :: मद्रास - २६

SPECTRUM
COLOUR
PENCILS
स्पेक्टरम
रंगीन
पेन्सिल
बच्चों के लिये, नक्शा बनाने, व चित्र बनाने के लिये, ये पेन्सिलें अत्यन्त आवश्यक हैं। तरह तरह के रंगों में ये प्राप्य हैं।
निर्माता:
दी मद्रास पेन्सिल फेक्टरी
मद्रास - २१
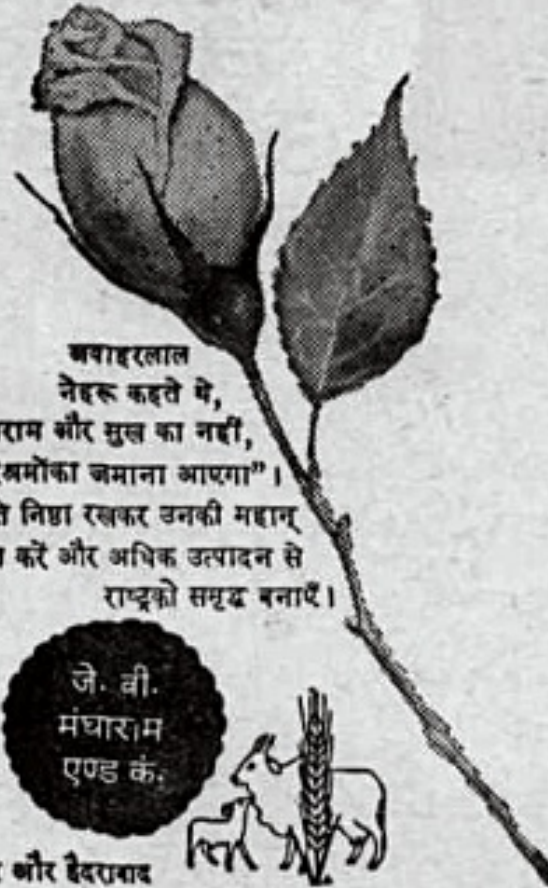
कर्तव्यही साधना है!
जवाहरलाल
नेहरू कहते थे,
"भविष्यमें आराम और सुख का नहीं,
किन्तु निरन्तर परिश्रमोंका जमाना आएगा"।
आएँ, हम भी कर्तव्यके प्रति निष्ठा रखकर उनकी महान्
आत्माको श्रद्धाञ्जलि समर्पित करें और अधिक उत्पादन से
राष्ट्रको समृद्ध बनाएँ।
जे. बी.
मंघाराम
एण्ड कं.
ग्वालियर और हैदराबाद

दिलीप, हम लोग आज शाम को तुमसे कैरम खेलने आये हैं।
तुम उदास क्यों लगते हो, दिलीप ?
मेरा तोता 'टोटो' आज दोपहर के बाद उड़ गया।
कोई चिन्ता नहीं ! मैंने बाबूजी से सुना है कि पालतू चिड़ियाँ और जानवर बराबर लौट आते हैं।
चैं
चैं
फुर्र
फुर्र
दिलीप और उसके साथियों ने खोया तोता खोज निकाला
मुझे लगता है कि 'टोटो' की आवाज़ सुन रहा हूँ।
चलो, बाहर निकलें और उसे ढूँढें।
मैं अपना 'एवरेडी' टॉर्च लाता हूँ।
दिखाई पड़ता है नहीं !
नहीं, कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता है।
दिलीप, 'टोटो' उस कार्निस पर है !
देखो, देखो, बिल्ली 'टोटो' को देख रही है।
यह तो 'टोटो' ही है !
चिल्लाओ नहीं कोई ! उससे सिर्फ 'टोटो' डर जायेगा। अशोक, दौड़कर ऊपर जाओ और उस बिल्ली को खिड़की पर से भगा दो।
बिल्ली भाग गई ! मैं अपने 'एवरेडी' की रोशनी 'टोटो' पर डाले रहूँगा। उसे कुछ दिखाई नहीं पड़ेगा, इसलिये उड़ नहीं सकेगा। किसी नौकर को भेजो कि 'टोटो' को पकड़ ले।
'टोटो' पकड़ा गया ! भई वाह !
तकदीर देखो कि मेरे पास 'एवरेडी' टॉर्च था।
JWTUC 2926

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

अब हमने इस अंक से एक नया धारावाहिक प्रारम्भ किया है—"पाताल दुर्ग।"

चन्दामामा के धारावाहिकों को पाठकों ने हमेशा बड़े चाव से पढ़ा है। हमें उमीद है, इसे भी पढ़ा जायेगा।

एक धारावाहिक शुरु होता है, तो हमारे पास पत्र आने लगते हैं कि आगे क्या होगा? प्रश्न स्वाभाविक है...पर हमारा उत्तर अनावश्यक। देखते जाइये क्या होता है। इसी में आनन्द है। हम इतना ही कहेंगे, जो भी कुछ होगा, उससे आपका मनोरंजन ही होगा।

वर्ष: १७ जून १९६६ अंक: १०

भारत का इतिहास

शिवाजी केवल महावीर ही नहीं, युद्धतन्त्र में निपुण ही नहीं, शासन में भी बड़ा समर्थ था। इसलिए उसने शासन में और राजनीति में, बड़ी सफलता प्राप्त की।

उसके शासन संचालन के लिए आठ मन्त्री थे। पेशवा मुख्य मन्त्री था, अमात्य आर्थिक मन्त्री था। मन्त्री, राजा के नित्य कार्यक्रमों को बनाता। सचिव राजा का लेखक था और जमाबन्दी का काम किया करता। सुमन्त वैदेशिक विषयों का अधिकारी था। सेनापति, सेना का अधिकारी था। पंडितराव प्रधान पुरोहित, न्यायाधीश मुख्य न्याय कर्मचारी था। अन्तिम दो के सिवाय औरों की सैनिक जिम्मेवारियाँ भी थीं।

शासन में ३० शाखायें थीं। राज्य, कई प्रान्तों में विभक्त था। एक एक प्रान्त का एक एक राजप्रतिनिधि था। शिवाजी, अपने राज्य में तो कर इकट्ठा करता ही, समीपवर्ती मुगलों के आधीन प्रदेश में, बीजापुर नवाब के प्रान्त में, पोर्चुगीज़ के राज्य में भी "चौथ" नाम का कर वसूलता।

शिवाजी ने अपनी सेना की भी पुनः व्यवस्था की, उसे विस्तृत किया। उसमें नौका दल की भी स्थापना की। सेना के लिए तोपें और बन्दूकें भी मँगवायीं।

शिवाजी के बहुत-से किले थे। हर किले में समान स्तर के तीन अधिकारी हवालदार, सब्रीस, सर्नोबट होते थे। सेना में हर जाति के लोग थे। सेना में नियन्त्रण बहुत कड़ा था, सेना के साथ स्त्रियाँ नहीं होती थीं। यदि कोई सैनिक स्त्री के साथ जाता तो उसका सिर काट दिया जाता। ब्राह्मणों और गौवों को मारना निषिद्ध था।

वाहन के लिए बैलों का उपयोग किया जा सकता था। युद्ध के समय सैनिकों का व्यवहार ठीक रहना आवश्यक था।

शिवाजी की घुड़सेना में २५ घुड़सवारों का एक दल होता था। उनके ऊपर एक हवालदार होता था। पाँच हवालदारों पर एक जुम्लादार होता था। दस जुम्लादारों के ऊपर एक हज़ारी होता था। हज़ारी के ऊपर, पाँच हज़ारी, सर्नोबत नाम का सर्वसेनानी होता। पदातियों में नौ सैनिकों का एक दल था। उसका एक नायक होता था। पाँच नायकों के ऊपर एक हवालदार होता। दो तीन हवालदारों के ऊपर एक जुम्लादार, दस जुम्लादारों के ऊपर एक हज़ारी होता था।

योद्धा के रूप में, शासक के रूप में भारत के इतिहास में शिवाजी का स्थान बहुत ऊँचा है। जो कोई उससे मिलने आता, वह उसे मन्त्र मुग्ध-सा कर देता।

धैर्य और साहस के कारण, राजतन्त्र के कारण, वह जागीरदार के पद से छत्रपति के पद पर आया। असंगठित मराठाओं को वह संगठित कर सका। उसके द्वारा

संगठित मराठा १८ वीं सदी में भी सबसे अधिक बलवान थे। उन्होंने ब्रिटिश सरकार से भी लोहा लिया।

राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिए, सभी आवश्यक गुण शिवाजी में थे। उसने रणजीतसिंह की तरह विदेशियों की सहायता से शासन न किया। उसकी सेना को उन्ही के आदमियों ने प्रशिक्षण दिया।

उसने जो शासनीय व्यवस्था की, वह स्थाई रही और औरों ने उसका अनुकरण भी किया। उन मुसलमान ऐतिहासिकों ने भी, जिन्होंने उसकी आलोचना की

है, उसकी इन उपलब्धियों की प्रशंसा की है।

उसने अपने राज्य में प्रजा का गौरव, अपना गौरव समझा। उसको जो मुस्लिम स्त्रियाँ और बच्चे मिले, उनका, उसने आदर किया और यह भी देखा कि उसके सैनिक उनका आदर करें। यदि कोई इस विषय में उसकी आज्ञा का उलंघन करता, तो उसको कड़ा दण्ड दिया जाता। उसने कभी स्त्रियों से छेड़ छाड़ न की, न मस्जिदों के मामलों में ही दखल दिया। युद्ध के कैदियों को ठीक तरह देखा।

उसका एक ही लक्ष्य था--देशीय साम्राज्य की स्थापना और वह उसके लिए निरन्तर कार्य करता रहा। परन्तु उस कार्य के पूर्ण होने से पहिले ही उसकी आयु समाप्त हो गई।

शिवाजी निज़ी जीवन में भी बड़ा नियन्त्रित था। उस समय के व्यसन उसमें न थे। छुटपन में, जो आदर्श उसके माता के गुरु समर्थ रामदास ने सिखाये थे, वे कभी न भूला। महाराष्ट्र के उद्धार के लिए, उसका धर्म पर अधिक बल रहा। हिन्दु धर्म के उत्थान को हमेशा प्रोत्साहित करता रहा। उसकी दृष्टि में धर्म सजीव शक्ति थी, जो मनुष्य और स्वभाव को बनाती थी, इसलिए उसमें धर्मान्धता न थी। दूसरे धर्मों के प्रति उसमें असहिष्णुता भी न थी। मुस्लिम सन्तों के लिए उसमें भक्ति थी। मस्जिदों के लिए, उसने जागीरें तक दीं। जब उसके सैनिक किसी जगह को लूटते, तो मस्जिदों और स्त्रियों को आदर की दृष्टि से देखते।

नेहरू की कथा

[२३]

१९२३ में जवाहर अल्हाबाद म्युनिसिपलेटी के चेयरमेन निर्वाचित हुए। एक साल में ही वे उस काम से ऊब गये। उनके काम की सब ने प्रशंसा की। सब ने उनको सहयोग दिया। उनके समय में काम भी जल्दी जल्दी हुआ और कुछ वृद्धि दिखाई दी। फिर भी जवाहर ने उस पद पर न रहना चाहा। चूँकि सरकार म्युनिसपलिटी को प्रजा के हित में कोई भी कार्य न करने दे रही थी। यूँ तो म्युनिस्पलिटी के अधिकार भी बहुत कम थे। तो भी अगर कोई काम करने की सोचते, तो सरकार उसको मंजूर न करती।

तीन साल की अवधि के लिए जवाहर निर्वाचित हुए थे। पर वे इतने उससे ऊब गये थे कि एक साल में ही उन्होंने इस्तीफा देने का प्रयत्न किया। परन्तु उनके साथियों ने उनको ऐसा करने से रोका। एक और साल जैसे तैसे उन्होंने वह काम निभाया। १९२५ में उन्होंने चेयरमेन के पद को त्याग दिया। इसका मुख्य कारण, उनकी पत्नी कमला की बीमारी का अधिक होना था। महीनों लखनऊ हस्पताल में उनकी चिकित्सा होती रही। उस वर्ष कान्ग्रेस का अधिवेषन कानपुर में हुआ। जवाहर कान्ग्रेस के तब भी प्रधान मन्त्री थे। इसलिए वे कानपुर लखनऊ और इलहाबाद के बीच में निरन्तर घूमते रहे, वे किसी भी काम में मन न लगा सके।

कमला को स्विजरलेन्ड ले जाकर वहां चिकित्सा करवाने की सिफारिश की गई। जवाहर जी को भी दूर देश जाने का

कारण मिला। बिना दूर गये उनका मन शान्त होता नजर न आता था। १९२६ मई में, जवाहर, कमला और अपनी लड़की इन्दिरा जहाज से वेनिस के लिए निकले। उनके साथ उनकी बहिन विजयलक्ष्मी और उनके पति रणजीत पंडित, जो पहिले ही यूरुप की यात्रा पर जाने की सोच रहे थे, आये।

जवाहर १३ वर्ष बाद यूरुप जा रहे थे। इन १३ वर्षों में वहां बहुत-से परिवर्तन हो गये थे। एक महायुद्ध हो गया था। एक क्रान्ति हुई थी और उसके कारण बहुत-सी तब्दीलियां हो गई थीं। वे यूरुप में एक वर्ष नौ महीने रह गये। इसमें से बहुत-सा समय स्विजर्लैन्ड के जिनेवा में ही गुज़र गया। उनकी दूसरी बहिन कृष्णा भी १९२६ के ग्रीष्मकाल में वहां गई।

कमला की चिकित्सा मोन्टाना के पास के सेनिटोरिया में की जा रही थी, जब उनका स्वास्थ्य कुछ कुछ सुधरने लगा तो वे फ्रान्स, जर्मनी, और इन्ग्लेण्ड भी देखने गये। वे एक पहाड़ की चोटी पर थे। जब सरदियों में वहाँ बर्फ गिरती, तो जवाहर सोचते कि वे केवल भारत से ही दूर न थे बल्कि यूरुप से भी दूर थे। वे बर्फ के खेलों में मस्त रहते और राजनीति के बारे में कुछ कुछ तटस्थ से रहते। समय धीमे धीमे सरक रहा था। कमला का स्वास्थ्य धीमे धीमे सुधर गया।

इस समय जवाहर कुछ पुराने क्रान्तिकारियों से मिले। वे सब बुझे दीप से थे। उन्होंने श्याम जी कृष्णवर्मा, महेन्द्र प्रताप, मौलवी मोबेडला, मौलवी बरकतुल्ला आदि को देखा।

बर्लिन में, भारतीयों की एक कमेटी थी। १९१४ जब युद्ध हुआ, तो जर्मन

विश्वविद्यालयों में आनेवाले भारतीयों ने जर्मनी की सहायता करने के लिए यह कमेटी बनाई थी। चूँकि वे जर्मनी को चाहते थे और ब्रिटेन का विरोध करना चाहते थे जर्मनी ने इस कमेटी का खूब आदर किया। परन्तु युद्ध के समाप्त होते ही, यह कमेटी विच्छिन्न हो गई। उनमें से कुछ को ही ब्रिटिश सरकार ने भारत आने दिया। पराजित जर्मनी में उनके लिए कोई स्थान न था न भारत ही वे आ सकते थे। वे न घर के थे। न घाट के।

१९२६ में, भारत में, लेजिस्लेटिव एसेम्बली और प्रान्तीय कोन्सिलों के लिए चुनाव हुए। जवाहर को, उनसे कोई आसक्ति न थी। पर उन दिनों कुछ ऐसी घटनायें हुई, जिनके कारण जवाहर कुछ कुछ उद्विग्न-से हो गये।

शासन सभाओं में, स्वराज्य पार्टी (कान्ग्रेस की शाखा) के प्रतिद्वन्द्वी के रूप में, मदनमोहन मालवीय और लाला लाजपत राय ने नेशनलिस्ट पार्टी की स्थापना की। जवाहर न जानते थे कि किन आदर्शों को लेकर, उसकी स्थापना की गई थी। यह नई पार्टी स्वराज्य पार्टी से भी अधिक दक्षिण पक्ष की थी। यह केवल हिन्दुओं की पार्टी थी। इसने हिन्दु महासभा से मिलकर काम किया।

मालवीय जी स्वभाव से हिन्दु पक्ष के थे। वे यद्यपि कान्ग्रेस में थे, तो भी उनको कान्ग्रेस के आन्दोलनों से कोई सहानुभूति न थी। कभी वे कान्ग्रेस की वर्किन्ग कमेटी के सदस्य न रहे। कभी उन्होंने कान्ग्रेस के आदेश का पालन न किया। यही नहीं, वे हिन्दु महासभा के मुख्य नेताओं में थे। वे जातिवादी थे। सामाजिक और आर्थिक विषयों से कोई

सम्बन्ध न था। देश के राजा महाराजाओं और ज़मीन्दारों के वे मित्र थे। राजनैतिक दृष्टि से, वे इतना ही चाहते थे कि भारत पर विदेशी शासन न रहे। युद्ध के अनन्तर जो परिवर्तन संसार में हुए, वे उनसे अपरिचित ही रहे।

इसलिए उनको स्वराज्य पार्टी से अधिक वाम पक्ष का पार्टी समझना, कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इसलिए ही उन्होंने उससे भी अधिक प्रतिक्रियावादी पार्टी की स्थापना की और उसका नेतृत्व किया। यह सब जवाहर समझ सकते थे। परन्तु लाला लाजपतराय का इनके साथ जाना देख उनको आश्चर्य हुआ। निर्वाचन के सिलसिले में लाला जी ने वक्र रूप से, कान्ग्रेस पर जो अरोप किये, उनके कारण भी जवाहर को अचम्भा हुआ।

पर देश में धर्मान्धता प्रबल हो रही थी। इसलिए इस तरह की पार्टियों का पैदा हो जाना स्वाभाविक था। हिन्दू बहुमत के बारे में अल्पमत मुस्लिमों को सन्देह था और हिन्दुओं को यह डर था कि वे उन पर धौंस जमायेंगे। ज्याद़ती करेंगे। पंजाब में मुसलमानों का बहुमत था, वहाँ हिन्दू और सिखों को भय था कि वे उनको सतायेंगे।

इस धर्मान्धता के कारण, स्वराज्य पार्टी को धक्का पहुँचा। उसमें जो मुसलमान थे, वे उससे सम्बन्ध विच्छेद करके, मुसलमानों की संस्थाओं में शामिल हो गये और कुछ हिन्दू नेशनलिस्ट पार्टी में भरती हो गये। लाला लाजपतराय की पंजाब में बहुत प्रतिष्ठा थी। मालवीय जी के, उनके साथ होने के कारण, नेशनलिस्ट पार्टी की प्रतिष्ठा भी बढ़ी।
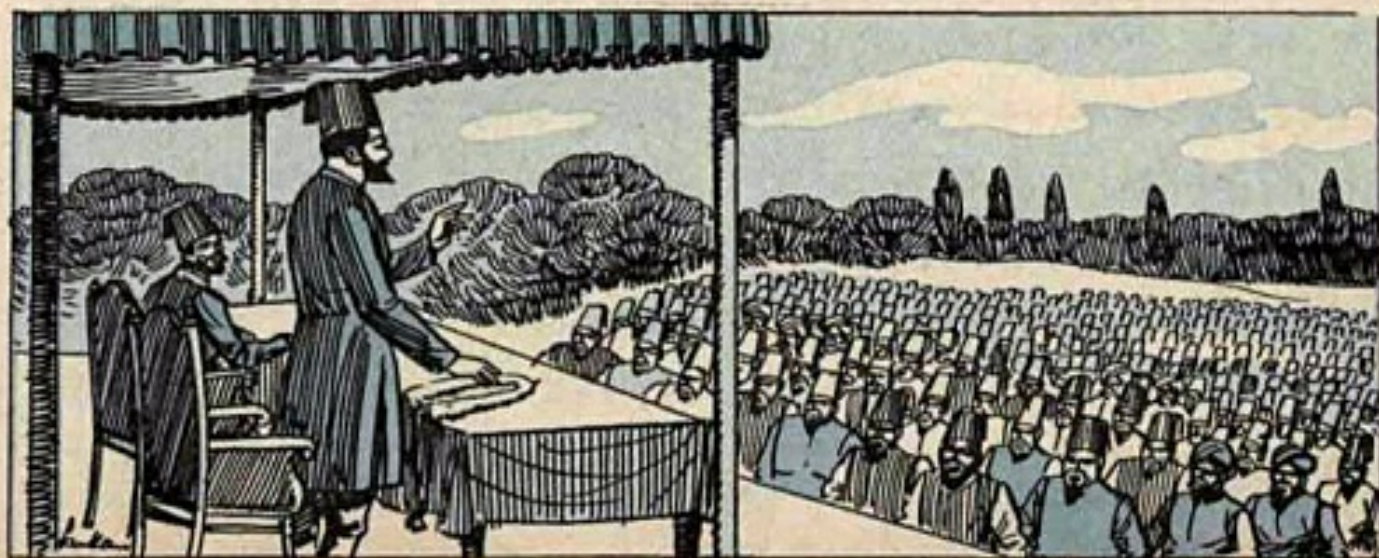
पाताल दुर्ग

कुन्तल देश के मन्त्री का लड़का, शशिकान्त एक दिन अपने मित्र भद्र और जयन्त के साथ शिकार खेलने ज़ंगल गया। जंगल में हरिण, जंगली सूअर आदि खूब थे। परन्तु शशिकान्त और उसके मित्रों ने उनका शिकार न किया। वे शेर की तलाश में, बहुत दूर जंगल में निकल गये। करीब दुपहर के समय उनका प्रयत्न सफल हुआ। वे एक पहाड़ी नाले के साथ साथ जा रहे थे कि नाले के पार शशिकान्त को एक शेर खड़ा दिखाई दिया। शेर तभी पानी पीकर फिर जंगल में जाने को तैय्यार था।

शशिकान्त ने उस शेर को अपने मित्रों को दिखाते हुए कहा—"हम घोड़े यहीं छोड़ दें और चुपचाप नाला पार करके, शेर को चारों तरफ़ से घेर लें। हममें से किसी न किसी के बाण का वह अवश्य शिकार होगा।" घोड़े पर से उतरकर, शशिकान्त जा ही रहा था कि जयन्त ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर उसको रोका। उसने कहा—"शशिकान्त जल्दी न करो। नाले के उस पार का जंगल कदम्ब राज्य का है और उस राजा से हमारी बड़ी दुश्मनी है। उनकी सीमा में जाना हमारे लिए आपत्ति जनक हो सकता है।"

उनकी इकलौती पुत्री कान्तिसेना को उपहार में दे देंगे। यह ठीक रहेगा न ?" भद्र ने कहा।

यह सुन शशिकान्त बड़ा हँसा। शेर ने सिर मोड़ा। अपनी ओर आते शिकारियों को देखा। थोड़ा गरजा। फिर पूँछ हिलाता आगे चला गया। उसी समय शशिकान्त ने शेर के गले का निशाना बनाकर एक बाण छोड़ा। वह बाण जाकर उसे लगा। लगते ही वह जोर से गरजा और घायल होकर नाले की ओर कूदा।

शशिकान्त और उसके मित्र झट अलग हो गये। घुटने भर के पानी को तुरत पार कर गये और शेर पर उन्होंने तीन ओर से बाण छोड़े। इस बार एक बाण शेर के पेट पर लगा। वह गरजता तीनों शिकारियों में पास शशिकान्त पर लपका।

शशिकान्त ने सोचा कि अब बाण से काम न चलेगा। उसने तलवार निकाली, इतने में पेड़ों के पीछे आहट होने लगी और देखते देखते एक भाला शेर के सिर पर जोर से लगा।

शशिकान्त तो शिकार के जोश में था। उसने अपने मित्र की सलाह की अवहेलना की और हँसकर कहा—"मैं वैसे ही डरपोक हूँ। मुझे और डरपोक न बनाओ। हम कदम्ब राज्य को जीतने के लिए उस राज्य में प्रवेश नहीं कर रहे हैं। क्रूर पशुओं का शिकार खेलने जा रहे हैं। वह काम खतम होते ही, हम फिर अपने राज्य में आ जायेंगे।"

"शशिकान्त, तुमने खूब कहा। यदि शेर हमें मिल गया, तो माँस कदम्ब के राजा के पास भेज देंगे और उसका चमड़ा

शशिकान्त और उसके मित्र चकित होकर उस तरफ़ देख रहे थे कि इतने में सुनाई पड़ा—"सीमा पार करके आये हुए शत्रुओं को मार दो।" और उन पर बाण वर्षा भी होने लगी।

शशिकान्त घायल होकर, धूल चाट रहा था। वह जोर से चिल्लाया—"भद्र जयन्त, तुम जल्दी भाग जाओ। कपट युद्ध करनेवाले शत्रुओं से लड़ना अच्छा नहीं है।"

पर तब तक जयन्त बाण की चोट से नीचे गिर गया था। भद्र ने भागने के लिए जो पीठ मोड़ी, तो उसकी पीठ पर शत्रु का बाण लगा। पर उसने उस चोट की परवाह न की।

वह बड़ी तेज़ी से भागता गया। नाला पार कर घोड़ों के पास गया और बड़ी कठिनाई से घोड़े पर सवार हुआ और घोड़ा सरपट दौड़ने लगा। उसके साथ बाकी दोनों घोड़े भी भागे। नाले के पार से कुछ शत्रु सैनिक भागे भागे आये और उन पर बाण छोड़ने लगे। "उसे जीता जी न भागने दो। यहाँ जो घायल प्राण छोड़ने को है, वह कुन्तल
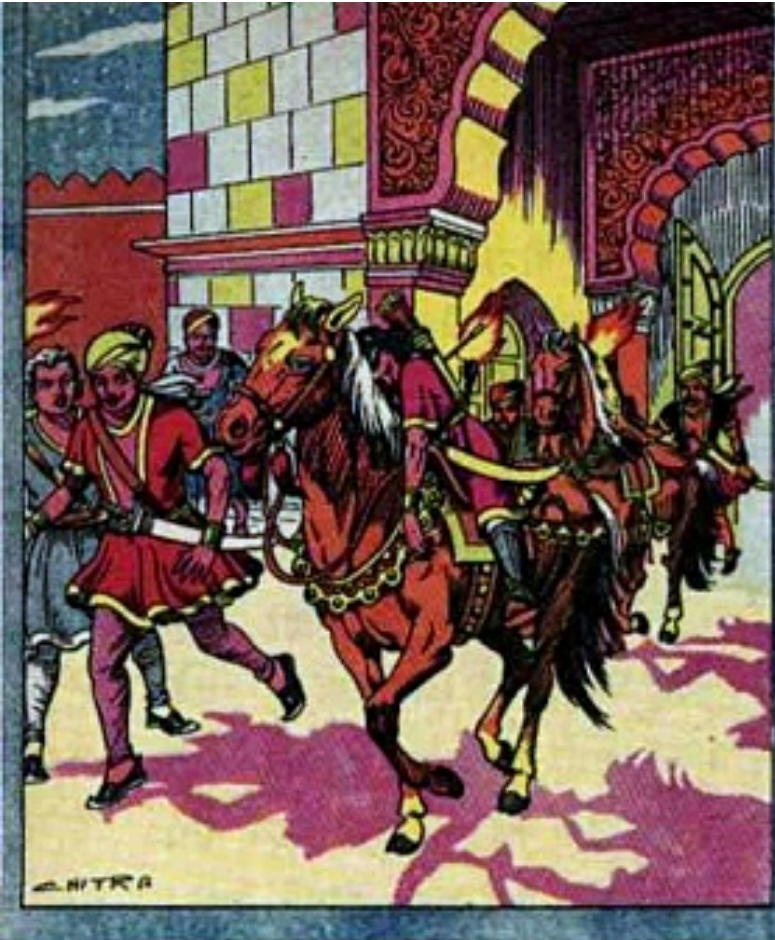
देश के मन्त्री का लड़का मालूम होता है।" उनको पीछे से ये बातें सुनाई पड़ रही थीं।

भद्र की हालत ऐसी थी कि वह कुछ भी न सुन सकता था। वह घोड़े के गले के बाल पकड़कर उस पर झुक-सा गया था। चूँकि घोड़ा रास्ता जानता था, इसलिए वह सीधे उसको राजधानी ले जाने लगा।

इधर नाले के पास घायल शशिकान्त और जयन्त को घेरकर बहुत-से हथियार बन्द सिपाही खड़े हो गये। शेर तब तक प्राण छोड़ चुका था। वे लोग, जो भद्र का पीछा करते गये थे, जब वह उन्हें न मिला, तो निराश हो वे नाले के पास वापिस आ गये।

मगर शशिकान्त का घोड़ा उनको मिल गया, चूँकि उसकी लगाम किसी पेड़ से अटक गई थी।

"महाराज! क्षमा कीजिये। वह घायल दुश्मन के साथ, दो घोड़े भी जंगल में कहीं चले गये हैं। बहुत मुश्किल से हम इसे पकड़ पाये हैं। यह पंच कल्याणी मालूम होता है। कीमती जीन आदि को देखकर हमने सोचा कि यह घोड़ा कुन्तल देश के मन्त्री के लड़के का ही था।" सैनिकों ने घोड़े को आगे चलाते हुए कहा।

कदम्ब राजा उग्रसेन ने तरेरते हुए सैनिकों की ओर एक बार देखा, फिर पास में हाथ बाँधे खड़े सेनापति की ओर मुड़कर कहा—"सेनापति! हमारे सैनिक इतने निकम्मे हैं कि घायल शत्रु को भी नहीं पकड़ सकते हैं। इन लोगों के भरोसे ही क्या हमने कुन्तल देश के राजा से दुश्मनी मोल ली थी?"

सेनापति ने कुछ कहना चाहा, पर राजा के मुँह पर क्रोध देख कहा—"महाराज" वह हिचकिचाने लगा।

उग्रसेन शशिकान्त के पास आया। उसे पैर से इधर उधर हिला डुला कर कहा—"यह मन्त्री का लड़का है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। अभी कुछ जान बाकी मालूम होती है। इसे ले जाकर, कहीं गुफ़ा में डाल दो और कोई शेर उसे खा जायेगा और जो दूसरा घायल है, वह कौन है?"

दो सैनिकों ने जयन्त को हिलाकर कहा—"इसके प्राण पखेरु तो कभी के उड़ चुके हैं, महाराज।"

"तो उसे भी गुफ़ा में डाल दो।" कहते हुए उग्रसेन ने सेनापति की ओर मुड़कर कहा—"सेनापति! आज जिस समय हम शिकार खेलने निकले थे, शायद वह समय अच्छा न था। जब मैंने बाण छोड़ा था, तो मेरा यही ख्याल था कि ये कोई कुन्तल देश के मामूली सैनिक हैं। मुझे क्या मालूम था कि ये कुन्तल देश के मन्त्री का लड़का और उसके दोस्त थे। वह राजा हम से कहीं अधिक बलवान है। मन्त्री की चतुरता भी हम जानते हैं। हम राजधानी जाकर, एक पत्र लिखकर उनको भेजेंगे कि सीमा के सैनिकों ने गलती से यह सब कर दिया है। कुछ ऐसा ही सोचना होगा।"

"हां, महाराज हां, इसके लिए हमारे महामन्त्री सर्व समर्थ हैं।" सेनापति ने कहा।

उग्रसेन ने कुछ न कहा। वह घोड़े पर सवार होकर चल दिया। उसके पीछे सेनापति भी चला। सैनिकों में से दस आदमी, शशिकान्त और जयन्त को चटाइयों की तरह कन्धों पर डाल "हां....
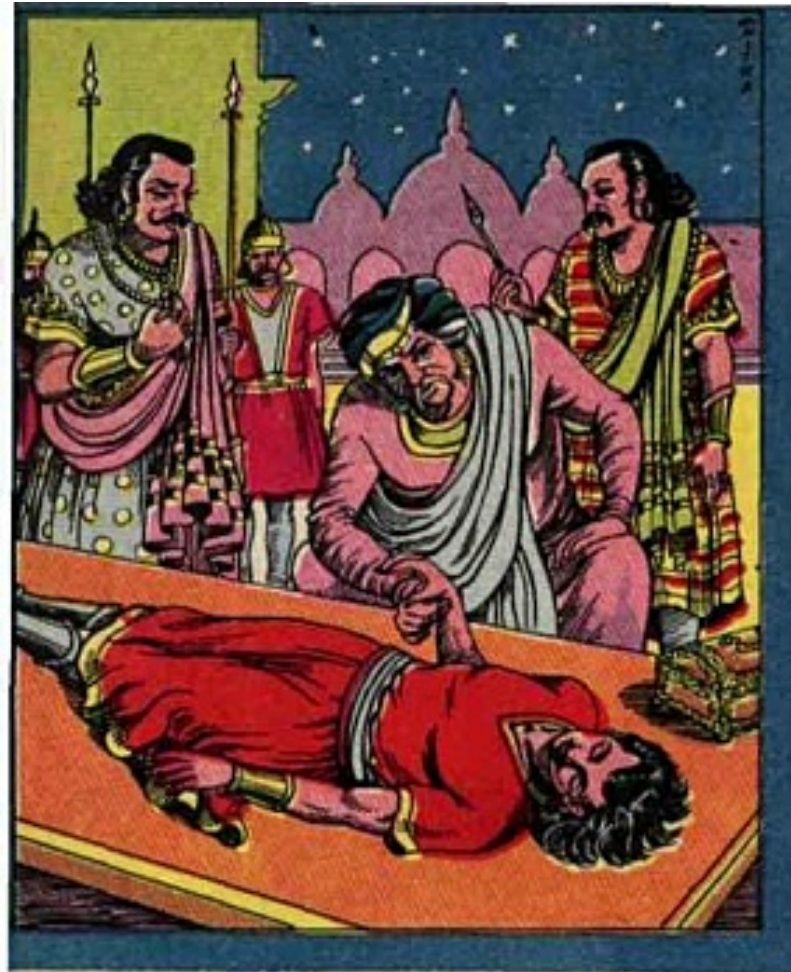
हूँ...." करते यूँ गुफ़ा की ओर चले, जैसे कोई पालकी उठा रहे हों।

और वह घोड़ा, जिस पर घायल भद्र पड़ा हुआ था, नगर द्वार बन्द होने से पहिले द्वार के पास पहुँचा। द्वार रक्षक मन्त्री के लड़के की प्रतीक्षा कर रहा था। जब उसने उसके मित्र भद्र को उस हालत में देखा, तो वह घबरा गया। उसे छूकर यह जानने के लिए भी डरा कि वह जीवित था कि नहीं और वह घोड़ा, जिस पर जयन्त सवार होकर गया था, भद्र के घोड़े के साथ था।

द्वार रक्षक भद्र के घोड़े के साथ मशालें लेकर राजधानी की ओर चले। एक मनुष्य को, जिसकी पीठ में बाण घुसा हुआ था और उस घोड़े को द्वार रक्षकों को मशालें लेकर, ले जाते देखने के लिए बहुत-से लोग वहाँ जमा हो गये। सिवाय इसके कि घोड़े पर मन्त्री का दोस्त भद्र था, कोई कुछ न जानता था।

घोड़ा सीधे राजमहल में गया और वहाँ के घुड़ साल में खड़ा हो गया। इस बीच खबर मिलते ही, राजा शतयानु और मन्त्री गंगाधर वहाँ आये। नौकरों ने भद्र को होशियारी से घोड़े पर से उतारा। राजवैद्य ने उसकी परीक्षा की और उसकी पीठ पर लगे बाण को होशियारी से निकाला। उस समय भद्र कुछ हिला डुला।

वैद्य ने उसकी परीक्षा करके कहा—"महाराज! मै भरसक कोशिश करूँगा। यदि भाग्य ने साथ दिया, तो भद्र के जीने की आशा है।"

नौकर, भद्र को एक चारपाई पर लिटाकर महल के अन्दर ले गये। तब तक मन्त्री बाण की परीक्षा करता खड़ा
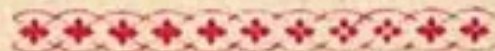
था। फिर उसने एक सेवक को बुलाकर उसके हाथ में बाण देते हुए कहा—"इसे खूब धो धाकर ले आओ।"

"शशिकान्त और जयन्त क्या हुए? महामन्त्री, मैंने कभी न सोचा था कि हमारे देश में इतने प्रबल शत्रु हैं।" शतयानु ने कहा।

"महाराज! मुझे ऐसा लगता है कि यह घटना हमारे राज्य में नहीं हुई है। यदि भद्र ज़िन्दा रहा, तो हम जान जायेंगे कि जंगल में क्या क्या हुआ था। मैं नहीं सोचता कि शशिकान्त और जयन्त फिर वापिस आयेंगे। भद्र को जिस बाण ने घायल किया है, उस पर मुद्रित चिन्हों से...." कहते कहते, मन्त्री गंगाधर ने अंगोछे से आंसू पोंछे। शतयानु भी विह्वल था। शशिकान्त मन्त्री का इकलौता लड़का था। क्या कहकर उसको आश्वासन दिया जा सकता था?

मन्त्री के दिये हुए बाण को खूब धोकर, खूब साफ़ करके, सेवक ने लाकर फिर उसको दिया। गंगाधर ने मशाल की रोशनी में उस बाण को देखा। चकित होकर उसे शतयानु को देते हुए कहा—

"महाराज, इस बाण को छोड़नेवाला कदम्ब राजा उग्रसेन है। उसके नीचे उसका राज चिह्न "भालू" है।"

शतयानु ने बाण को देखा जाँचा। "महामन्त्री! इसका क्या मतलब है? बिना युद्ध की घोषणा के उग्रसेन ने हम पर आक्रमण किया है? हमारे भेदिये क्या कर रहे हैं? सीमा के सैनिक क्या कर रहे हैं?" उसने क्रोध में पूछा।

"महाराज! खुल्लम खुला हम पर हमला करने की ताकत उग्रसेन में नहीं है। फिर भी हमारे लिए चौकन्ना रहना
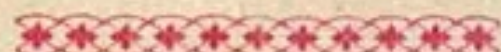
अच्छा है। सेनापति से कहिये कि सेना तैयार की जाये और देश की रक्षा की व्यवस्था की जाये।" गंगाधर ने कहा।

शतयानु ने एक सेवक को, सेनापति को बुलाकर लाने को कहा। इसके बाद वह महल की ओर जा ही रहा था कि एक सैनिक हाँफता हाँफता राजा के पास आया। "महाराज, कदम्ब राजा के दूत नगर के द्वार के पास हैं। क्या आज्ञा है कि उनको आपके पास लाया जाय?"

"उग्रसेन हमारे पास दूत भेज रहा है?" शतयानु को आश्चर्य हुआ।

"कितने दूत आये हैं? उनके हाव भाव कैसे हैं? क्या वे कुछ घमंड अकड़ दिखा रहे हैं?" गंगाधर ने पूछा।

"नहीं तो! वे कुल मिलाकर छः हैं। उनके साथ दो आदमी हैं, जिनकी मुश्कें बंधी हुई हैं। सब ऐसे दिखाई देते हैं, जैसे उनकी जान हथेली पर हो।" सैनिक ने कहा।

"महामन्त्री, इसके पीछे कोई कुटिल राजनीति तो नहीं है?" शतयानु ने सिर हिलाते हुए पूछा।

"उग्रसेन ऐसी बातों में बहुत चलता हुआ है? फिर भी यह जानना ज़रूरी है कि उन दूतों द्वारा उसने क्या कहला भेजा है। वे कौन कैदी हैं, जिनकी मुश्कें बाँधकर लाया जा रहा है?" गंगाधर कुछ देर तक सोचता रहा, फिर उसने सैनिकों को आज्ञा दी—"अच्छा तो उन दूतों को तुरत सभा मन्दिर में लाओ।"

(अभी है)

ईर्ष्यालु

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव उतारकर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा — "राजा, अगर कोई ईर्ष्यावश तुम्हें इतने कष्ट दे रहा है, तो वह भी ताम्रकेतु की तरह नष्ट हो जायेगा और तुम गुणनिधि की तरह सब आपत्तियों से बाहर निकल जाओगे। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं उनकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

पूर्वी तट के एक राजा के एक लड़का हुआ करता था। उसका नाम ताम्रकेतु था। ताम्रकेतु की उम्र का मन्त्री का भी एक लड़का था। उसका नाम गुणनिधि था। दोनों की बुद्धि में, व्यवहार में कोई

वेताल कथाएँ

समानता न थी। ताम्रकेतु नीच बुद्धि का था और गुणनिधि सज्जन। सब गुणनिधि को चाहते थे। इसलिए ताम्रकेतु को उस पर बड़ी ईर्ष्या थी। वह राजा का लड़का था, इसलिए उसको तरह तरह से तंग करके, अपनी ईर्ष्या पूरी कर लेता था।

एक दिन गुणनिधि अपने गुरु के साथ वन में विचरण करने जा रहा था कि रास्ते में उसको एक सोने का पंख दिखाई दिया। वह चम चमा रहा था, इसलिए गुणनिधि ने उसे उठा लिया। "इसे रखूं, या छोड़ दूं?" उसने अपने गुरु से पूछा।

"रखोगे, तो भी दुःखी होगे, न रखोगे तो भी दुःखी।" गुरु ने कहा।

"तो रख लेना ही अच्छा है।" कहकर गुणनिधि ने उस पंख को अपनी टोपी में रख लिया। राजकुमार ने गुणनिधि की टोपी में चमकते पंख को देखकर पूछा—"तुम्हारी टोपी में यह क्या चमक रहा है?"

"सोने का पंख। चाहो तो ले लो।" मन्त्री के लड़के ने उसे देना चाहा।

"अरे किसे चाहिये, यह फालतू-सा पंख। सोने का पक्षी लाओ। यदि एक महीने में तुम उसे न लाये, तो तुम्हारा सिर कटवा दूंगा।" राजकुमार ने कहा।

मन्त्री का लड़का न जानता था कि वह पक्षी कहाँ था। सोने के पक्षी को पकड़ने का उपाय उसके गुरु ने ही बताया। राजोद्यान में एक बड़ा जल पात्र था। उसमें पक्षियों के लिए नहाने और पीने के लिए पानी था। गुरु की सलाह पर मन्त्री के लड़के ने उसमें से पानी निकलवा दिया और उसमें शराब भरवा दी और पास ही झाड़ियों की पीछे छुप गया। सवेरा होते ही, पक्षियों के झुन्ड उस तरफ आने लगे।

उन सब मे तेज एक सुनहरा पक्षी, सूर्य की तरह चमकता, तेजी से उड़ता आया। पात्र के ऊपर बैठा और उसमें रखा शराब पेट भर पी गया। पीछे से मन्त्री के लड़के ने उसे तब पकड़ लिया और ले जाकर, राजकुमार को दे दिया।

राजकुमार ने उसके पैरों में जंजीर डाल दी और जंजीर डालकर उसे इधर उधर घुमाने लगा। वह पक्षी उसकी इच्छानुसार न चलकर, कभी उसको चोंच से खरोंचता तो कभी पंखों से मारता।

"तुमने इस पक्षी को मुझ से बदला लेने के लिए कहा है। यह बात मैं कभी न भूलूँगा।" राजकुमार ने मन्त्री के लड़के से चिढ़कर कहा।

पक्षियों की रानी एक देवी थी वह पक्षियों द्वारा जान गई कि सोने का पक्षी पकड़ लिया गया था। उस देवी को वह पक्षी बड़ा प्यारा था। इसलिए वह गुस्से में, कमर में बंधे रत्नाभरण को उतार कर जमीन पर पटककर अपने महल में चली गई।

इसके अगले दिन मन्त्री का लड़का अपने गुरु के साथ, एक घाटी में शिकार करने गया। वहाँ उसे एक जगह चमचमाता रत्नाभरण दिखाई दिया। मन्त्री के लड़के ने उसे देखकर पूछा—"इसे रखूँ, या छोड़ दूँ?"

"रखोगे, तो दुःखी होगे, न रखोगे, तो दुःखी होगे।" गुरु ने कहा।

"तो रख लूँगा।" कहकर उसने वह आभूषण अपने कमर में लगा लिया।

"तुम्हारी कमर में यह आभूषण कहाँ से आया?" राजकुमार ने मन्त्री के लड़के से पूछा।

"जब मैं शिकार खेलने गया था, तब मुझे मिला।" मन्त्री के लड़के ने कहा।

कहा जाया जाये। परन्तु सौभाग्यवश्य वे पक्षियों की रानी के महल में आये। जब उसने उसकी कमर में वह आभूषण न देखा, तो तुरत मन्त्री के लड़के ने अपना अंगोछा उस पर डाला। उसको जबर्दस्ती पकड़कर, घोड़े पर बिठाकर अपने देश ले आया। पक्षियों की रानी चीखी चिल्लायी। पक्षियों ने उसे मारना खरोंचना चाहा, पर वह घोड़े के चाबुक से उनको मारता रहा। उसने उनको पास न आने दिया।

पक्षियों की रानी का सौन्दर्य देखकर राजकुमार बड़ा सन्तुष्ट हुआ।

"मैंने तुम-सी सुन्दरी कहीं नहीं देखी है। आओ हम दोनों शादी कर लें।" उसने कहा।

"यदि तुम मुझ से शादी करना चाहते हो, तो उस व्यक्ति को दण्ड दो, जो मुझे यहाँ लाया है।" पक्षियों की रानी ने कहा।

"हाँ, जरूर। बताओ क्या दण्ड दिया जाये?" राजकुमार ने पूछा।

"उसे उबलते तेल में डाल दो।" रानी ने कहा।

राजकुमार ने एक बड़े से पात्र में तेल गरम करवाया और उसमें मन्त्री के लड़के

"यह स्त्रियाँ पहिनती हैं। तुम उस स्त्री को पकड़ लाओ, जो इसे पहिनती है। यदि एक महीने में उसे न लाये, तो तुम्हारा सिर कटवा दूँगा।" राजकुमार ने कहा।

मन्त्री के लड़के ने यह बात जाकर अपने पिता से कही।

"जब वह गहना तुम्हें मिला था, तब तुम्हें उसे इस तरह रखना चाहिये था कि कोई देखे न? अब क्या किया जा सकता है?" मन्त्री ने कहा।

मन्त्री का लड़का अपने गुरु को साथ लेकर निकल पड़ा। वे न जानते थे कि

को डलवा दिया। पर मन्त्री के लड़के को तेल गरम न लगा। हुआ यह था कि पक्षियों की रानी ने अपने अदृश्य सेवकों से कह दिया था कि वे पात्र के नीचे की आग को ठंडा करते रहें। उन्होंने वैसा ही किया। पात्र का तेल गरम ही न हुआ।

राजा ने सोचा था कि मन्त्री का लड़का यूँ मर जायेगा, पर जब वह मरा नहीं, तो भी वह खास निराश नहीं हुआ। उसने पक्षियों की रानी से कहा- "अब मैंने तुम्हारी इच्छा पूरी कर दी है। अब हमारी कब शादी हो?"

"पहिले यह देखना है कि तुम्हें सचमुच मुझ पर प्रेम है कि नहीं?" उसने पूछा।

"हाँ, जरूर तुम्हारे लिए ही, तो मैं अपने मित्र की बलि देने के लिए मान गया था। क्या यह काफ़ी नहीं है?" राजकुमार ने पूछा।

"नहीं, तुम भी उस पात्र में उतरो।" पक्षियों की रानी ने कहा।

राजकुमार घबराया।

"क्यों तुम उस काम को करते घबराते हो, जो मन्त्री के लड़के ने बिना

चूं चाँ किये कर दिखाया था ? क्या यही है तुम्हारा प्रेम ?" पक्षियों की रानी ने पूछा।

राजकुमार को उस पात्र में लाचार हो घुसना पड़ा और वह उसमें उबल उबलाकर मर गया। चूँकि इस बार पक्षियों की रानी के अदृश्य सेवकों ने खूब आग जला दी थी।

राजकुमार के मरते ही पक्षियों की रानी, अपना सोने का पक्षी लेकर अपने महल में चली गई।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। पक्षियों की रानी ने मन्त्री के लड़के के बारे में क्यों पक्षपात किया था? वह ही सोने का पक्षी पकड़कर लाया था और वह ही जबर्दस्ती पक्षियों की रानी को पकड़कर लाया था। फिर रानी ने उसकी क्यों रक्षा की? इस प्रश्न का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा "पक्षियों की रानी ने कभी यह न चाहा था कि मन्त्री के लड़के को दण्ड मिले। राजकुमार की आज्ञा पर ही उसने जो कुछ किया था, किया था। पक्षियों की रानी के सब कष्टों का कारण राजकुमार ही था। वह उसको ही दण्ड देना चाहती थी। पर चूँकि उसे मन्त्री के लड़के पर ईर्ष्या थी इसलिए उसने सोचा कि वह उसको दण्ड देना चाहती थी।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

राक्षस का गोद लिया लड़का

एक राजा के तीन लड़के थे। नव वर्ष के दिन, उनके नहाने धोने और नये कपड़े पहिनने के बाद, राजा ने अपने लड़कों से पूछा—"तुम्हें रात को क्या क्या सपने आये थे?"

"मैंने देखा कि मेरे हाथ में बड़े बड़े नगर हैं, खेत, मैदान वगैरह हैं। पशु हैं, बड़े बड़े महल। उनमें दास दासी आदि हैं।" बड़े लड़के ने कहा।

"बहुत अच्छा सपना है। मैं इस सपने को साकार कर दूँगा।" कहकर राजा ने, अपने बड़े लड़के के नाम बड़ी जागीर लिखवा दी।

दूसरे लड़के ने यह देखकर कहा—"जैसा भाई को सपना आया था वैसा सपना मुझे भी आया।" राजा ने उसके नाम भी एक जागीर लिख दी। "तुम्हें क्या सपना आया?" उसने तीसरे लड़के से पूछा। उसका नाम मुकुन्द था।

"मुझे तो इतना अच्छा सपना नहीं आया था।" मुकुन्द कहता कहता हिचकिचाया। पर राजा ने ज़िद पकड़ीऔर कहा कि वह अपने सपने के बारे में कहे।

"और कुछ नहीं यही कि मेरे हाथ धोने के लिए, तुमने चान्दी के लोटे से पानी डाला और माँ ने अंगोछे से मेरे हाथ पोंछे। यह सपना मुझे आया।" मुकुन्द ने कहा।

"अरे दुष्ट कहीं का, तुम मुझ से, और अपनी माँ से सेवा करवाते हो? जाओ मेरे राज्य से। अगर कहीं कल, तुम मेरे राज्य में दिखाई दिये, तो तुम्हारा सिर

कटवा दूँगा, जाओ।" राजा गुस्से में चिलाया।
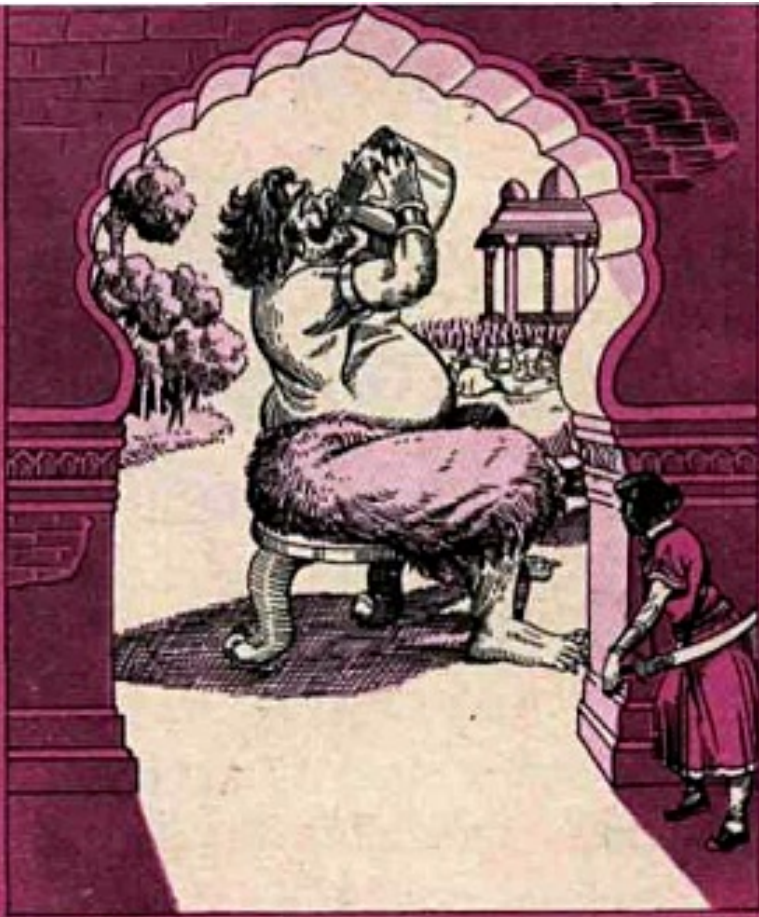
राजा गुस्से में अपने को भूल जाता था, यह मुकुन्द भी जानता था इसलिये वह पहिने कपड़ों में ही, तभी निकल गया। वह नाना कष्ट झेलता, छः महीनों बाद, एक बड़े किले में पहुँचा। उस किले की ड्योढ़ी में फाटक न थे। मुकन्द किले के आहाते में खड़ा खड़ा यह सोच रहा था कि कोई आयेगा और वह उससे नौकरी माँगेगा कि इतने में एक बड़ा राक्षस एक हाथ में बड़ा पात्र पकड़कर, सौ गौवों को हाँकता उस ओर आया। फिर पात्र को नीचे रखकर, एक एक गौ को दुहने लगा।

मुकुन्द को यह देख कर अचरज हुआ कि उस राक्षस की दोनों ही आँखें न थीं। राक्षस ने उस बड़े पात्र में दूध दुहा और उसको दोनों हाथों से पकड़कर गटागट पी गया। फिर उसने गौवों को, गौशाला में हांक दिया। किवाड़ बन्द कर, अपने घर की चौपाल में गया। और एक बड़े तख्त पर लेट गया।

मुकुन्द धीमे धीमे चलता, राक्षस के पीछे गया—"पिताजी...." उसने धीमे से कहा।

"कौन?" राक्षस ने पूछा।

"आपका लड़का....पिताजी।" मुकुन्द ने कहा।

"मेरे लड़का भला कब हुआ था?" राक्षस ने आश्चर्य से पूछा।

"अभी कुछ देर पहिले पैदा हुआ था, पिताजी।" मुकुन्द ने कहा।

"देखें, तो पास आओ।" कहते हुये राक्षस ने हाथ फैलाये, मुकुन्द ने राक्षस को पास आने दिया और उसको सारा शरीर सहलाने दिया।

"अच्छे हो भाई, तुमने मेरी आँखों की कमी पूरी करदी है। तुम्हें कोई कमी न होने दूँगा।" राक्षस ने कहा।

"मैं आपकी हर तरह से मदद करूँगा, पिता जी।" मुकुन्द ने कहा।

"मेरा भोजन ही दूध है। शायद दूध तुम्हारे लिये काफी न हो। जो तुम चाहो। अच्छी तरह खा पीकर बड़े होओ।" राक्षस ने कहा।

अगले दिन जब राक्षस, गौवों को चराने बाहर गया तो मुकुन्द ने झाड़ू और कपड़ा लेकर किले के सब कमरे साफ़ किये। बत्तीस साल पहिले राक्षस की आँखें चली गई थीं। तब से किसी ने किला न साफ़ किया था।

किला साफ़ करने के बाद, मुकुन्द को एक कोने में, एक बाँसुरी दिखाई दी। खिड़की के पास खड़े होकर वह उसे बजाने लगा। तुरत बाहर पेड़, आकाश में मेघ, राक्षस का किला सब ताल दे देकर नाचने लगे। मुकुन्द प्रकृति का नृत्य देख कर बड़ा खुश हुआ। वह बहुत देर उसे बजाता रहा। फिर बाँसुरी को उसने फेंट्र में रख लिया। गायन के समाप्त होते ही प्रकृति का नृत्य भी समाप्त हो गया। मुकुन्द को आश्चर्य हुआ।

शाम होते ही, राक्षस ने घर आकर मुकुन्द के कहा—"अरे वाह! भाई क्या नृत्य था। पैर बिल्कुल थक गये। मुझे गौवों का नाचना भी सुनाई दिया। मैंने भी नृत्य किया। विश्वास करो कि पैरों की नीचे की भूमि ने भी नृत्य किया।"

अगले दिन जब राक्षस गौवों को चराने ले जाने को था कि मुकुन्द ने पूछा—"क्यों, पिताजी आप क्यों कष्ट उठाते हैं?

किला पार करके वह कुछ दूर ही गया था उसे एक पहाड़ी दिखाई दी। ऐसा लगता था, जैसे कोई बड़ा घड़ा उलटकर रख दिया गया हो, उस पर हरी हरी ऊँची ऊँची घास थी। दूरी पर, एक सफ़ेद घर और उसके चारों ओर बड़े बड़े पेड़। मुकुन्द ने अपनी गौवों को उस पहाड़ी पर हांक दिया। वे वहां ही घास चरने लगीं। मुकुन्द एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़कर बैठ गया।

कुछ देर बाद, सफेद घर की खिड़की में एक पिशाचिनी आई और उसने मुकुन्द की ओर देख कर कहा—"बहिन बहिन एक चमकती आँखों वाला आया है। जल्दी आओ।" फिर दो पिशाचिनियाँ घर से निकलकर मुकुन्द जिस पेड़ पर चढ़ा हुआ था, उसके नीचे आईं, तुरत मुकुन्द ने बांसुरी निकाली और उसे बजाने लगा। फिर प्रकृति नृत्य करने लगी। पेड़, गौ, आखिर पहाड़ भी नाचने लगे। पिशाचिनियां नाचने लगीं। नाचती नाचती एक पिशाचिनी खूब ऊँची कूदी। तुरत मुकुन्द ने उसके बाल पकड़ लिये और उन्हें एक टहनी से बाँध दिया और उसे नीचे लटका दिया। इतने में दूसरी पिशाचिनी कूदी। उसे भी

आप घर में, आराम से बैठो। मैं गौवें चरा लाऊँगा।"

अच्छा, तो ले जाओ। चाहो गौवों को कहीं भी हांको, कोई बात नहीं। पर दूर के उस टीले पर एक सफेद मकान है। उसके पास न जाना। उसमें पिशाचिनियां हैं। उनके हाथ गिरें, उन्होंने ही मेरी आंखें चुराई हैं। उन पिशाचिनियों के कारण, तुम्हारा अपकार हो सकता है।" राक्षस ने उसको आगाह किया।

"हां, याद रखूँगा पिताजी...." कहकर मुकुन्द गौवें हांक कर ले गया।

उसी तरह पकड़कर मुकुन्द ने टहनी से लटका दिया।

"हमें छोड़ दो, तुम जो चाहोगे, हम करेंगे।" पिशाचिनियों ने कहा।

"मेरे पिताजी की आँखें वापिस कर दो।" मुकुन्द ने कहा।

"हमें यदि उतरकर जाने दिया। तो एक क्षण में उन्हें लाकर दे देंगे।" पिशाचिनियों ने कहा।

"यह नहीं होगा। यह बताओ कि मेरे पिताजी की आँखें कहाँ हैं। मैं उन्हें ले जाकर, अपने पिताजी को दूँगा और जब उनको लगाकर, वे देखने लगेंगे। तब तुमको छोड़ दूँगा। तब तक तुम्हें यहाँ लटके रहना होगा।" मुकुन्द ने कहा।

"रसोई घर में, बड़ी भट्टी के ऊपर के आले में, एक छोटी पेटी में दो फल हैं। बड़ी भट्टी के पास राक्षस बच्चे हैं। उन्हें देखकर "भौं भौं" न कहना, वे डर जायेंगे। "कू कू" करके उनको पास बुलाना, दुलारना, तब वे आले से फल ले आयेंगे। अगर उन फलों को तुम्हारे पिता ने खाया, तो उसको फिर दीखने लगेगा।" पिशाचिनियों ने कहा।

मुकुन्द उनके घर गया। रसोई घर में घुसते ही उसे एक तरफ़ सिकुड़कर बैठे हुए राक्षस के बच्चे दिखाई दिये। उनके हाव भाव देखकर, उसने वैसा न करना चाहा, जैसा कि पिशाचिनियों ने बताया था। उसे लगा कि उन्होंने उनको इसीलिए दुलारने के लिए कहा था, ताकि वे उसकी भी आँखें निकाल लें। इसलिए मुकुन्द उनको देखकर, ज़ोर से चिल्लाया— "भौं भौं" वे दोनों घबरा गये और भट्टी की आग में जल गये।

फिर मुकुन्द एक ऊँची तिपाई लाया। ऊंचे आले में से पेटी निकाली। उसमें से दो हरे फल लिये। पिशाचिनियों के चीखने चिल्लाने की उसने परवाह न की और अपनी गौवें लेकर, वह सीधा घर चला आया।

शाम को, जब राक्षस गौवों का दूध दुह रहा था, तो उसने कहा—"क्यों बेटा, आज गौवें दुगना दूध दे रही है?"

"तुम्हारी आंखें नहीं हैं, इसलिए तुम नहीं जानते कि अच्छी घास कहां है? आज मैंने गौवों को बड़ी अच्छी घास खिलाई।" मुकुन्द ने कहा।

राक्षस उस दिन, दो बड़े पात्र दूध पीकर अपने तख्त पर बैठ गया। मुकुन्द ने राक्षस के पास आकर, कहा—"पिताजी, आपके लिए दो फल लाया हूँ। खाओगे?"

"मै सिवाय दूध के कुछ नहीं खाता।" राक्षस ने कहा।

"नहीं, नहीं, आप ये फल खाकर देखिये। इनका स्वाद बहुत अच्छा है।" कहकर, मुकुन्द ने दो फल राक्षस को दे दिये। राक्षस ने एक फल को मुख में रखकर चबाते हुए कहा—"अरे, मेरी दाहिनी आँख से मुझे दीखने लगा है।" वह जोर से खुशी में चिल्लाया।

"तो दूसरा फल भी खाओ।" मुकुन्द ने कहा।

दूसरा फल खाकर राक्षस ने कहा—"मुझे दीखने लगा है। मेरी आंखें ठीक हो गई हैं।" वह खुशी में उछलने कूदने लगा। मुकुन्द को गले लगाकर उसने कहा—"मेरे बेटे ने मुझे आंखें दी हैं।" वह उसको चूमने लगा।

राक्षस का उल्लास कुछ कम होने पर, मुकुन्द ने पिशाचिनियों के बारे में बताया। तुरत राक्षस ने दो मशालें लीं और पेड़

के पास जाकर, लटकती पिशाचिनियां को जलाकर खाक कर दिया। घर आकर, उसने अपना तालियों का गुच्छा मुकुन्द को देते हुए कहा—"बेटा, इस किले में जितने कमरे हैं, उन सबकी चाबियाँ गुच्छे में हैं। उनमें जितना सोना, रत्न वगैरह हैं, वे सब तेरे हैं, मेरे मरने तक, तुम्हें इन्तज़ार करने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं अभी नहीं मरूँगा। मेरी हज़ार वर्ष की उम्र है। इसलिए अभी कमरे को खोलकर देख लो और पता लगा लो कि किस किस कमरे में क्या क्या है और जो तुम्हें चाहिए, ले लो।"

मुकुन्द ने गुच्छे की उन्तालीस चाबियां लीं, उनसे उन्तालीस कमरे खोले। उनमें रखे रत्न, आभरण, सोना, चान्दी देखकर, वह दंग रह गया। उसने सोचा कि अगर वह सारा संसार छानता, तो भी इतना धन उसे न मिलता। उसे वह खज़ाना फिजूल-सा लगा। उसने एक कैम्प और एक हीरा लिया। चान्दी के धागों से सिया हुआ, मोतियों से जड़ा कुड़ता उसने पहिना। उसने चान्दी की चप्पलें पहिनीं। फिर उसने रत्नों की मूठवाली तलवार ली। सोने की तारों से बनी उसने जंघिया ली। जंघिया बिल्कुल हल्का-सा था। परन्तु वह दुर्भेद्य कवच था। उसे, कोई तलवार नहीं काट सकती थी।

यह सब लेकर, वह राक्षस के पास वापिस आ रहा था कि उसको चालीसवां कमरा दिखाई दिया। उसके ताले पर जंग लगी हुई थी। गुच्छे की कोई भी ताली उसे न लगी। इसलिए उसने राक्षस के पास आकर कहा—"पिताजी, इस गुच्छे में जंग खाये हुए ताले को खोलने के लिए कोई चाबी नहीं है।"

"उसकी ताली खो गई है। पर उस कमरे में कूड़ा कर्कट के सिवाय कुछ नहीं है।" राक्षस ने कहा।

"तुम झूट बोल रहे हो, तुम नहीं चाहते कि मैं देखूँ कि उस कमरे में क्या है?" मुकुन्द ने कहा।

राक्षस ने लम्बी साँस लेकर कहा—"बेटा, तुम्हें अगर कमरे में जाने दिया, तो तुम मुझे न मिलोगे?" "क्या मुझ पर कोई आफ़त आयेगी?" मुकुन्द ने पूछा।

"तुम पर तो कोई आपत्ति न आयेगी, पर मुझ पर आयेगी।" राक्षस ने कहा। उसकी आँखों से काँच की गोलियों के से आँसू निकल रहे थे।

"मैं तुम पर आफ़त न आने दूँगा। मेरा विश्वास करो।" मुकुन्द ने कहा।

राक्षस ने एक पुरानी ताली, मुकुन्द को देते हुए कहा—"बेटा, तुम कहीं भी हो, पर मुझे कभी न भूलना।"

"पिताजी, मैं कहीं न जाऊँगा। तुम आँसू न बहाओ।" कहकर, मुकुन्द ताली लेकर, चालीसवें कमरे में गया। जंग खाये हुए ताले को खोला, अन्दर गया और हक्का बक्का खड़ा रह गया।

उस कमरे में एक देवता अश्व-सा था। उस पर सोने की जीन थी, उसका शरीर चान्दी की तरह चमक रहा था। उसके गले के बाल, सोने के रंग में चमक रहे थे। ऐसा लगता था, जैसे वह सवारी के लिए तैयार हो।

"अब आये हो राजकुमार! हमें शीघ्र जाना है। उधर तुम्हारे पिता ने, एक बेअक़्ली का काम करके अपने सिर पर आफ़त मोल ली। तुरत जाना है।" घोड़े ने मुकुन्द से कहा।

जिस कमरे में घोड़ा था, उसके बाहर बरान्डा था। उसे खोलकर, वह घोड़े को बाहर लाया। फिर उस पर सवार हो गया। तुरत वह घोड़ा आकाश में उड़ा और बाण के वेग से मुकुन्द के पिता के नगर की ओर गया।

"क्या हुआ? मेरे पिताजी ने क्या किया है?"

"तुम्हारी बहिन की शादी करने के लिए, तुम्हारे पिता ने घोषणा की कि जो कोई राजमहल के पास की खाई को घोड़े पर सवार होकर पार कर देगा, उसके साथ उसका विवाह कर देगा। कितने ही राजकुमार आये। उन्होंने उस खाई को पार करने की कोशिश की और वे उसमें डूबकर मर मरा गये। सच कहा जाये, तो कोई घोड़ा भी उस खाई को नहीं पार कर सकता। सब राजा क्रुद्ध हो उठे और वे मिलकर, अब उस पर हमला कर रहे हैं। यदि तुमने उसकी रक्षा न की, तो उसका सर्वनाश हो जायेगा।

मुकुन्द को, जिस फासले को तय करने के लिए छः महीने लगे थे उसे, उसने छः घंटों में पार कर लिया। मुकुन्द जब पहुँचा, तो शत्रु सेना महल को घेरे हुए थी। मुकुन्द अपने दिव्य घोड़े, दुर्भेद्य कवच और तलवार के भरोसे, अकेला ही सेना में घुस पड़ा। जल्दी ही शत्रु सेना तितर बितर हो गई। मुकुन्द तो शत्रुओं के टुकड़े कर रहा था। पर शत्रु उस पर एक चोट भी न कर पाये। घोड़े की अद्भुत शक्ति के कारण, शत्रु उसे पकड़ भी न सके।

सूर्यास्त होते होते युद्ध भी समाप्त हो गया, जो मरने से बच गये थे, वे भाग भग गये। यह सब किले की दीवारों

पर राजा के सैनिक देख रहे थे। उन्होंने राजा के पास जाकर कहा— "महाराज, आपत्ति टल गई है। स्वर्ग से मानों कोई इन्द्र आया और उसने हमारे सब शत्रुओं को भगा दिया।"

राजा बड़ा खुश हुआ। गाजे बाजे के साथ युद्ध भूमि में विश्राम करते मुकुन्द के पास आया। उससे, आतिथ्य स्वीकार करने के लिये कहा। वह अपने तीसरे लड़के को न पहिचान पाया।

मुकुन्द जब राजमहल में आया, तो एक बड़ी दावत तैयार थी।

"खाना खाकर हम फ़ुरसत से बातें करेंगे।" राजा ने कहा।

"मुझे भूख लग रही है। हाथ धोकर खाना खायेंगे।" मुकुन्द ने कहा। राजा जल्दी जल्दी गया और जब वह चान्दी के लोटे से पानी उसके हाथों पर उड़ेलने लगा, तो रानी पास ही एक सोने का थाल उसके हाथों के नीचे लिये खड़ी थी। उसके हाथ धोते ही, अंगोछे से उसके हाथ पोंछे।

मुकुन्द ने राजा की ओर मुड़कर, मुस्कराकर कहा—"तो मेरा सपना यानि बिल्कुल झूटा न था।"

तुरत राजा और रानी ने अपने लड़के को पहिचान लिया। राजा ने अपने लड़के से माफ़ी माँगी। उस दावत में उसने घोषित किया कि उसके बाद राज्य का उत्तराधिकारी उसका छोटा लड़का ही था, क्योंकि बड़े दोनों लड़के युद्ध में आना तो अलग, ऊँटपटाँग बातें कर रहे थे।

मुकुन्द, राक्षस को न भूला। महीने में एक बार वह घोड़े पर सवार होकर राक्षस के किले में जाता और एक दिन वहाँ रहता।

जो छुओ वह सोना हो जाये

एक व्यापारी के एक लड़का था। व्यापारी की पत्नी पहिले गुजर चुकी थी। इसलिए उसने अपने लड़के को बड़े लाड़-प्यार से पाला पोसा। उस के लिए उसने सोना दोनों हाथों से कमाया और उसके सुख सन्तोष के लिए उसे पानी की तरह खर्चता भी आया।

व्यापारी बीमार पड़ा। मौत को नजदीक पा उसने अपने लड़के को बुलाकर कहा—"बेटा, मैं अपने जीवन के अन्तिम क्षण में तुमको आशीर्वाद देता हूँ कि अगर तुम मिट्टी भी छुओ तो वह सोना हो जाये।" यह कहकर उसने प्राण छोड़ दिये।

व्यापारी का लड़का, अपने पिता के लिए कुछ दिन रोया धोया। शोक के कम हो जाने के बाद, वह भी पिता की तरह व्यापार करने लगा। भाग्य ने उसका भी व्यापार में साथ दिया। उस पर भी सोने की वर्षा हुई।

कुछ समय तक इस प्रकार खूब पैसा कमाने के बाद, लड़के को अपने पिता का अन्तिम आशीर्वाद याद हो आया। उसने सोचा कि उनके ही आशीर्वाद के कारण उसको इतना धन मिला था।

"भाग्य का इस प्रकार खिलना, आपत्तिजनक है। इस बारे में कुछ न कुछ करना होगा।" यह सोच उसने माल ऐसी जगह खरीदने का निश्चय किया, जहाँ वह महँगा था और जहाँ वह सस्ता था, वहाँ बेचने की सोची। इसलिये उसने जहाँ खजूर बहुत महँगे थे, वहाँ खरीदे और उन्हें बेचने के लिए मिश्र ले गया। उस देश में खजूर निहायत सस्ते होते हैं।

मिश्र के राजा को मालूम हुआ कि कोई कहीं से खजूर लाकर, उसके देश में बेच रहा था। उसने अपने कर्मचारियों से पूछा—"कौन है यह अजीब व्यापारी?" कर्मचारी, उस लड़के को राजा के पास ले गये।

"तुम इस बेअक्ली का व्यापार करके अपने को क्यों तबाह करते हो?" राजा ने युवक से पूछा।

"महाराज! पिताजी के आशीर्वाद के कारण मैं चाहे कुछ भी करूँ, मुझ पर सुवर्ण वर्षा होती रहती है। भाग्य का इतना साथ देना अच्छा नहीं है। इसलिये मैं उसके रास्ते में विघ्न डाल रहा हूँ।" युवक ने कहा।

"तुम्हारे पिता ने तुम्हें क्या आशीर्वाद दिया था?" राजा ने पूछा।

"यह कि यदि मैं इस तरह मिट्टी छूऊँ तो वह सोना हो जायेगा।" कहते हुये लड़के ने हाथ में कुछ मिट्टी ली और उसे छोड़ दिया। उसके छोड़ने के बाद युवक के हाथ में कुछ रह गया।

"क्या है?" राजा ने आश्चर्य से पूछा।

"कोई मुद्रिका-सी है।" कहकर युवक ने राजा के हाथ में वह रखी। वह राजा की मुद्रिका थी। उनके वंश में न मालूम वह कब से थी। एक साल पहिले वह खो गई थी। राजाने उसको ढुँढवाने के लिए बहुत-सा रुपया खर्चा था। पर वह मिला नहीं।

"सचमुच तुम्हारे पिता का आशीर्वाद अद्भुत है। तुम्हारा भाग्य भगवान भी नहीं बदल सकता।" यह कहकर, उस राजा ने, अपनी लड़की का उसके साथ विवाह किया। बाद में, वह लड़का ही मिश्र का राजा बना।

वैद्य, पन्नालाल के पास आया, लड़के को देखकर उसने कहा। "यह है! यह तो हमारे जमीन्दार का लड़का है। इसे यहां लिटाइये। मैं इसकी मरहम पट्टी किये देता हूँ। कुछ ग्रहदोष मालूम होता है, जमीन्दार साहब से कहकर बाद में ग्रह शान्ति भी करवा लेंगे।" कहते हुये उसने लड़के की मरहमपट्टी की और उसको होश में लाया।

फिर पन्नालाल, लड़के को जमीन्दार के घर ले गया। अपना काम पूरा करके, फिर उसने लड़के के गिरने के बारे में और उसकी चिकित्सा के बारे में बताया। "जरा मुझे ज़रूरी काम है। मुझे विदा दीजिये।" उसने कहा।

जमीन्दार ने पन्नालाल की प्रशंसा की। यदि समय पर वह उसकी मदद न करता, तो न मालूम उसके लड़के का क्या होता, जो बेहोश हो गया था।

"आपने मेरा इतना उपकार किया है, कि आपको मुझसे कुछ न कुछ लेना ही होगा। मैं आपका ऋण नहीं रखना चाहता। आप जो चाहें, उसे ले जाइये।" जमीन्दार ने कहा।

पन्नालाल ने कुछ देर सोचकर, हाथ पसारकर कहा—"यही बात है, तो आप मुझे दो कम्बल और एक सौ रुपया दिलवाइये।"

पन्नालाल को, जो कुछ भी न लेना चाहता था, हाथ पसारता देख, जमीन्दार को बड़ा आश्चर्य हुआ। पर वचन देकर मुकर भी न सकता था। इसलिए जमीन्दार ने दो नये कम्बल और सौ रुपये देकर पन्नालाल को भेज दिया।

पन्नालाल उनको लेकर, सीधे राम के घर गया। कम्बलियाँ राम की पत्नी को दे दीं। उसने उसे पाँच रुपये देकर एक चारपाई खरीदकर लाने के लिए कहा। पन्नालाल ज्योतिषी वैद्य के पास गया। ग्रह शान्ति के लिए, उसने उसको पचास रुपये दिये। फिर झोंपड़ा वापिस चला आया। बाकी पैसा उसने राम की पत्नी को और खर्चों के लिए दे दिया और वह अपने गाँव चला गया। जमीन्दार को जब मालूम हुआ कि पन्नालाल ने उसके धन का किस प्रकार उपयोग किया था, तो उसे लगा, जैसे उसका सिर काट दिया गया हो, वह अपनी नाक ऊँची रखने के लिए राम के झोंपड़े में आया। "यह सब क्या है? तुम्हें जो चाहिये, क्या वह देने के लिए मैं नहीं हूँ? दूसरे गाँव के पन्नालाल की सहायता की क्या आवश्यकता है?" फिर उसने यह दिखाने ही कोशिश की, कि उसने ही पन्नालाल से उनकी सहायता करवाई थी। अच्छा दिन निकलवाकर उसने अपने लड़के के लिए और राम के लिए भी ग्रह शान्ति करवाई। तभी राम की बीमारी कम हो गई थी और वह ठीक होने लगा था।

भी कोई लाभ नहीं। अगर चाहो, तो दवा दिये देता हूँ।" उसने जमीन्दार से कहा।

"जब दवा देने से कोई फायदा नहीं है, तो क्यों दवा दी जाये? कुज और राहु की सन्धि के बारे में शान्ति करना क्या कोई मामूली बात है? धनियों के लिए भी यह बड़ा खर्चीला काम है। यह विचारा क्या कर पायेगा इसे? अब आप जाइये।" जमीन्दार ने ज्योतिषीवैद्य को भेज दिया।

इसलिए ही यह सब रोना धोना था।

यह सुन पन्नालाल ने राम की पत्नी से कहा—"जमीन्दार से माँगकर कम से कम एक चारपाई और कम्बल तो ले आते। क्या रोगी को, गीले फर्श पर लिटाया जा सकता है? इसका ईलाज होना चाहिए और ग्रह शान्ति भी। मनुष्य को मरना है, इसलिए क्या उसे मरने दिया जाता है? अन्तिम क्षण तक दवा करते रहना चाहिए, चलो वैद्य को बुला लाये।"

राम की पत्नी पन्नालाल के साथ जाकर, जमीन्दार से कम्बल और पलंग माँगने के लिए तैयार न हुई। वैद्यक के बारे में कहने के लिए भी वह डरी।

"सब मिलाकर पचास, साठ रुपये खर्च हो सकते हैं।" वैद्य ने कहा। उसने आकर राम को दवा दी।

"मैं फिर आपके दर्शन करूँगा और सब बात कर लूँगा।" वैद्य को भेज दिया और झोंपड़ेवालों से यह कहकर कि वह जल्दी ही वापिस आ जायेगा पन्नालाल जमीन्दार के घर गया।

जमीन्दार के .घर के पास के आम के पेड़ से एक लड़का आम तोड़ते तोड़ते धड़ाम से गिरा। पन्नालाल तुरत उसके पास गया। लड़का कोई दस बारह वर्ष का था। उसे कहीं कहीं चोट लगी थी। वह बेहोश हो गया था।

पन्नालाल उस लड़के को उठाकर, जल्दी जल्दी ज्योतिषीवैद्य के पास गया। "यह लड़का पेड़ से गिर पड़ा है। घायल हो गया है। बेहोश है। चिकित्सा कीजिये।" उसने कहा।

"यह कब गिरा था? इसका नाम क्या है? इसका नक्षत्र क्या है?" वैद्य ने कहना शुरु किया।

"मुझे कुछ नहीं मालूम! ज्योतिष बाद में देखा जा सकता है। पहिले चिकित्सा कीजिये।

"तुम न घबराओ। मैं जमीन्दार से कह दूँगा। मैं भी एक जमीन्दार हूँ।" कहकर पन्नालाल राम की पत्नी को, ज्योतिषी वैद्य के पास ले गया।

यह जानकर कि कोई नया रोगी आया था, वैद्य ने रोगी का नाम, जन्म नक्षत्र, और जन्म तिथि के बारे में पूछा।

"इस आदमी की कुण्डली आपने पहिले ही देख ली है। पहिले चिकित्सा कीजिये। उसके बाद कुज राहु की सन्धि की शान्ति भी कीजिये। बताइये कितना खर्च होगा?" पन्नालाल ने कहा।

दाता याचक बना

एक बार पन्नालाल को अपने ग्रामाधिकारी की ओर से कुछ वस्तुयें एक जमीन्दार को पहुँचानी पड़ीं। चूँकि पन्नालाल से अधिक विश्वासपात्र का मिलना मुश्किल था, इसलिए उसने वह काम उसको सौंप दिया।

पन्नालाल जमीन्दार के गाँव पहुँचा। वह उसके घर जा रहा था कि रास्ते की बगल की झोंपड़ी में से किसी का रोना सुनाई दिया। उस रोने में एक स्त्री कह रही थी—"क्या ज्योतिषीवैद्य की बात सच होने जा रही है? यदि तुम चले गये, तो हमारा कौन और सहारा है? अरे भगवान, क्या मुसीबत ढायी है?"

एक पुरुष कह रहा था—"मैं अभी मरा नहीं हूँ और तुम ऐसे रो रही हो, जैसे मैं मर ही गया हूँ। क्या मुझे आराम से मरने भी न दोगे? क्या शोर मचा रखा है?"

यह सुन पन्नालाल झोंपड़े में घुसा। अन्दर एक स्त्री थी और चार बच्चे। स्त्री के बाल बिखरे हुए थे। सब के सब रो रहे थे। एक फटी चटाई पर एक चीथड़ा ओढ़कर एक आदमी किसी बीमारी के कारण कराह रहा था।

पन्नालाल ने उनको देखकर पूछा—"क्यों रो धो रहे हो? क्या मुसीबत आ पड़ी है तुम पर? मुझे बताओ। मैं भर सक तुम्हारी मदद करूँगा।" सरदी के दिन थे। फिर वह बीमार था, उसके पास ओढ़ने को एक पुराना कम्बल भी न था। इसलिए पन्नालाल ने अपना शाल उस पर ओढ़ दिया।

रोगी की पत्नी ने अपनी सारी परिस्थिति पन्नालाल को बता दी। रोगी का नाम राम था। वह जमीन्दार के घर काम किया करता था। उनका झोंपड़ा भी जमीन्दार की जमीन पर था। जमीन्दार के घर काम करके उस तनख्वाह से भला कुटुंबे का कैसे गुज़ारा होता! जमीन्दार के नौकर जब कभी बीमार पड़ते, वह ही उनका ईलाज करवाता। यदि वे खुद पैसा देकर चिकित्सा करवाते, तो जमीन्दार अपना उसमें अपमान समझता। यही नहीं जमीन्दार के यहाँ काम करनेवालों के

पास इतना पैसा भी न होता था कि अपना ईलाज स्वयं करवायें।

पिछले दिनों ही राम को बुखार आना शुरु हुआ था। उस प्रान्त के मशहूर ज्योतिषीवैद्य को जमीन्दार ने राम की चिकित्सा करने के लिए भेजा।

यह वैद्य वैद्यक और ज्योतिष में भी बड़ा चतुर था। जो कोई उसे बुलाता, पहिले वह उसकी जन्मकुण्डली देखता, अगर उसकी आयु होती, तो दवा देता, नहीं तो कहता—"यह बीमारी ठीक होनेवाली नहीं है, यदि चाहो, तो दवा दिये देता हूँ।" उस वैद्य को डर था, अगर कोई उसका मरीज मर गया, तो उसकी बदनामी होगी। उसकी बात कई के बारे में ठीक निकली थी इसलिए सबको भरोसा हो गया था और सब उसको ज्योतिषीवैद्य कहा करते थे। कुछ उससे चिकित्सा करवाते बहुत घबराते थे।

ज्योतिषीवैद्य ने पहिले राम की जन्मकुण्डली देखी, इधर उधर का हिसाब किया फिर कहा—"कोई फायदा नहीं, नहीं बचेगा। अब उसके जीवन में कुज और राहु की सन्धि है। शान्ति करने पर

लोगों को मारता इस तरफ़ आ रहा है।"
तुरत शक्तिदेव, एक शक्ति हाथ में लेकर घोड़े पर सवार होकर उस सूअर का पीछा करने लगा। जब उसने शक्ति सूअर पर फेंकी तो सूअर बच गया और एक खोह में जा घुसा। शक्तिदेव घोड़े पर से उतरा। उस खोह में गया। कुछ देर बाद, वह एक उद्यान में गया और वहाँ उसने एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री को देखा।

उसे देखते ही वह डरती डरती उसकी ओर भागी आई।

"कौन हो तुम? क्यों डर रहे हो?" शक्तिदेव ने पूछा।

"मैं चण्डविक्रम राजा की लड़की हूँ। मेरा नाम बिन्दुरेखा है। एक धोखेबाज, राक्षस मुझे यहाँ उठा ले आया है। वह खाना ढूँढ़ने के लिए, सूअर के रूप में बाहर गया और किसीने तब उसको घायल कर दिया और वह यहाँ आकर मर गया।" उसने कहा।

"मैंने ही उसको मारा था!" शक्तिदेव ने कहा।

"सच! तुम कौन हो?" उसने फिर पूछा।
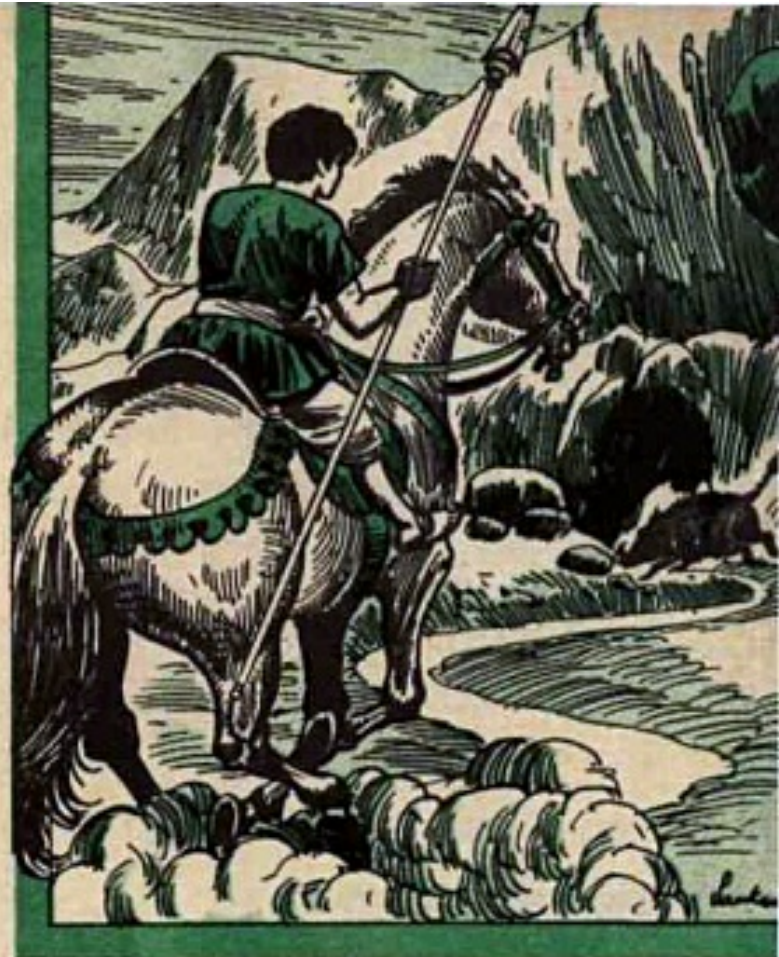
"मैं एक ब्राह्मण हूँ। मेरा नाम शक्तिदेव है।"

"ऐसी बात है! तो तुम ही मेरे होनेवाले पति हो।" उसने कहा।

शक्तिदेव उसके साथ खोह से बाहर आया, उसे अपने घर ले गया, अपनी पहिली पत्नी बिन्दुमती की अनुमति पर उसने बिन्दुरेखा से विवाह किया। बिन्दुरेखा गर्भवती हुई। उसका आठवाँ महीना चल रहा था कि बिन्दुमति ने शक्तिदेव से कहा—"बिन्दुरेखा के गर्भ को चीरकर, उसका शिशु मेरे पास लाओ।"

इस इच्छा पर शक्तिदेव बड़ा शंकित हुआ। वह बिन्दुरेखा के पास गया।

उसे देख कर बिन्दुरेखा ने पूछा—"क्यों, यूँ दुःखी हो? क्या बिन्दुमति ने मेरा गर्भ चीरकर लाने को कहा है? वैसा ही करो। उसमें कोई गल्ती नहीं है। डरो मत।"

शक्तिदेव ने वैसा ही किया। बिन्दुरेखा का पेट चीरा और गर्भ को ऊपर निकाला। तुरत वह उसके हाथ में खड्ग हो गया और वह विद्याधर हो गया। उसी समय बिन्दुरेखा अदृश्य हो गई।

तब उससे बिन्दुमति ने कहा—"हम तीनों शापग्रस्त विद्याधर राजकुमारियाँ हैं। हम कनकपुरी की हैं। हमारी दूसरी बहिन कनकरेखा को तुमने वर्धमान में देख ही लिया था, वह शाप विमुक्त होकर कनकपुरी पहुँच गई है। मेरी तीसरी बहिन भी शाप विमुक्त हो गई है। मैं भी वहीं जा रही हूँ। हमारी बड़ी बहिन चन्द्रप्रभा वहीं है। यदि तुम अपने खड्ग के प्रभाव से कनकपुरी पहुँच गये, हमारा पिता हम चारों का तुमसे विवाह कर देगा।" यह कह वह भी अदृश्य हो गई।

शक्तिदेव गगन के मार्ग से कनकपुरी पहुँचा। वहाँ, राज भवन की छत पर, जिन तीन कन्याओं के शव उसने देखे थे, वे अब सजीव थे। चन्द्रप्रभा भी वहीं थी।

ये चारों बहिनें, उसको अपने पिता के पास ले गईं। उनके पिता शशिखण्ड ने अपनी लड़कियों का उससे विवाह किया। विद्याधर राज्य का उसको राजा बनाया। उसका नाम शक्तिवेग रखा। शक्तिवेग अपनी चारों पत्नियों के साथ विद्याधर राज्य पर राज्य करने लगा।

"मैं सच कह रहा हूँ या झूट, यह बाद में सोचा जा सकता है। पहिले यह बताओ कि कनकपुरी में पलंग पर जो मरी पड़ी थी, वह यहाँ कैसे जीवित है?" शक्तिदेव ने पूछा।

तुरत कनकरेखा ने अपने पिता से कहा—"पिताजी, इसने सचमुच कनकपुरी देखी है। मैं शाप ग्रस्त विद्याधरिनी हूँ, जिसने मानव जन्म लिया है। इस बात का मानव का जानना ही, मेरे लिए शाप विमुक्ति है। यही, मुझसे और मेरी बहिनों से विवाह करेगा।" कहकर उसने प्राण छोड़ दिये।

राजमहल रोने धोने से गूँजने लगा। शक्तिदेव ने सोचा कि वह कहीं का भी न रहा था। कुछ देर तो वह निराश हुआ, फिर उसका हौसला बढ़ा। मरने से पहिले कनकरेखा ने कहा ही था कि वह और उसकी बहिनें उसकी पत्नियाँ बनेंगी। इसलिए उसने फिर कनकपुरी जाने की ठानी। फिर वह विकटपुरी के बन्दरगाह पर गया। वह वहाँ पहुँच ही रहा था कि उसको समुद्रदत्त दिखाई दिया। जब जहाज़ टूटा था, तब वे कैसे जीवित बच गये थे, दोनों ने आपस में एक दूसरे को बताया।

"जब एक ही नौका में ही गये थे और दोनों भँवर में फँसे थे, उनमें से एक कैसे ज़िन्दा रह सकता है? तुमने ही हमारे पिता को मारा है। कल तुम्हें, चण्डिका को बलि दे देंगे।" यह कहकर, सत्यव्रत के लड़कों ने उसे बाँध दिया और वे चण्डिकालय ले गये।

जब उसने देखा कि उसकी रक्षा करनेवाला कोई न था, तो शक्तिदेव ने उस चण्डिका को प्रणाम किया और उससे रक्षा करने की प्रार्थना की और वह सो गया। जब उसने आँखें खोलीं, तो सत्यव्रत की लड़की बिन्दुमति उसको दिखाई दी। उसने उसके पास आकर कहा—"मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। मुझ से शादी करो। मेरे भाई, मेरे लिए बहुत-से सम्बन्ध लाये। पर मैंने मना कर दिये। पर तुम्हें देखते ही मैं तुम्हारी पत्नी होना चाहती हूँ।" जब उसके भाइयों को मालूम हुआ कि जिसको वे बलि देने जा रहे थे उसको उनकी बहिन ने वर चुन लिया था, तो वे उस विवाह के लिए मान गये। वह उससे विवाह करके वहीं रह गया।

एक दिन, उसके साले भागे भागे उसके पास आये। "जीजा, एक भयंकर सूअर,

शक्तिदेव उस दिन समुद्रदत्त के घर रहा। अगले दिन कुछ व्यापारियों के साथ एक नौका में उतस्थल द्वीप के लिए निकल पड़ा। वहाँ, वह अपने बन्धु विष्णुदत्त के घर ठहरा। वह व्यापारियों की गली में से जा रहा था कि सत्यव्रत के लड़के उसे मिले, उसे पहिचानकर उन्होंने पूछा—"अरे ब्राह्मण! तुम हमारे पिताजी के साथ गये और अब अकेले चले आ रहे हो। हमारे पिताजी कहाँ हैं?"

"तुम्हारे पिता समुद्र के बीच में, एक भँवर में गिर गये थे।" शक्तिदेव ने कहा।

आपसे विवाह करूँगी। आप तब तक यहीं रहिये!" चन्द्रप्रभा ने कहा।

जब वह वृषभगिरि जा रही थी, तब उसने शक्तिदेव से कहा "मेरे साथ, मेरे नौकर चाकर भी आ रहे हैं। आपको अकेला रहना होगा। कुछ भी हो, आप सबसे ऊँची मंजिल पर न जायें।"

शक्तिदेव अकेला था, उसे कुछ सूझ न रहा था। वह सारा महल देखने लगा। कई विचित्र बातें उसने देखीं। जब और कुछ देखने को न रहा, तो उसने जानना चाहा कि चन्द्रप्रभा ने क्यों सबसे ऊँची मंज़िल पर जाने को रोका था। वह सीढ़ियों से ऊपर चढ़ने लगा। ऊपर तीन मण्डप थे, किवाड़ खोलकर अन्दर गया। वहाँ एक रत्नों का पलंग था। उस पर हँस तूलिका तल्प था, उस पर एक मानव आकृति-सी थी, जिसने आपाद मस्तक अपने को ढक रखा था। उसने जब कपड़ा उठाया, तो पाया कि वह कनकरेखा ही थी, वह ऐसी लेटी थी, जैसे सो रही हो। पर उसमें बिल्कुल प्राण न थे।

"यह स्वप्न है? भ्रम है? या जादू है? मैं जिससे विवाह करना चाहता हूँ, वहाँ

मरकर कैसे प्रत्यक्ष हुई!" शक्तिदेव ने सोचा। वह दूसरे मण्डपों में गया, वहाँ भी उसने दो सुन्दर स्त्रियों को इसी अवस्था में देखा। वह चकित होकर नीचे गया। घर से बाहर एक बावड़ी थी। उसके पास ही एक घोड़ा खड़ा था। उस पर ज़ीन थी। उस पर सवार होकर, उसने टहलने की सोची। उसके पास गया। परन्तु उस घोड़े ने एक दुलत्ती मारकर उसे बावड़ी में धकेल दिया। जब वह फिर पानी के ऊपर आया, तो वह वर्धमानपुर के उद्यान के कुँये में था।

यह सब उसके लिए माया-सी थी। विद्याधरपुर क्या हुआ! वह वर्धमानपुर कैसे पहुँचा! यह सब किसने किया है!" यह सोचता सोचता शक्तिदेव अपने घर गया। उसके पिता और बन्धु उसको देख बड़े खुश हुए।

तुरत राजा की घोषणा, उसको फिर एक बार सुनाई दी। "यदि किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय युवक ने कनकपुरी देखी हो, तो राजा उसके साथ अपनी लड़की का विवाह करके, उसको युवराज बनायेंगे।" यह सुन शक्तिदेव ढ़िंढ़ोरा पीटनेवाले के पास गया। उसने कहा—"मैंने कनकपुरी देखी है।" वे उसे राजा के पास तुरत ले गये।

राजा ने उसे देखकर पूछा—"क्या फिर धोखा देने आये हो!"

"यदि मैं धोखा दूँ, जो आप सज़ा देना चाहे, वह दीजिये। मुझे राजकुमारी के पास भेजिये।" शक्तिदेव ने कहा।

राजा ने अपनी लड़की को वहाँ बुलवाया। उसने भी उसे पहिचानकर, पिता से कहा—"यह फिर कोई झूट कहेगा!"

शक्तिदेव

[२]

इतने में अन्धेरा हो गया। कहीं कहीं से, बड़े बड़े पक्षी, ज़ोर ज़ोर से चिल्लाते वहाँ आये, उस पेड़ पर मँड़राये और वहीं सो गये।

यदि इस समुद्र से, बाहर न निकला गया, तो वह भी सत्यव्रत की तरह अवश्य मर जायेगा, यह सोचकर शक्तिदेव पास में सोते हुए एक पक्षी के पंखों में घुस गया। सवेरा होते ही, वह पक्षी उड़ा, आहार के लिए किसी द्वीप के एक उद्यान के ऊपर वह मँडराया। तुरत शक्तिदेव, उसके पंखों से बाहर निकल आया।

वह उस उद्यान में घूम रहा था कि फूल तोड़ने के लिए आई हुई दो स्त्रियाँ उसको देखकर चौंकीं। उसने उनके पास आकर पूछा—"यह क्या देश है और आप कौन हैं?"

"यह कनकपुरी है। विद्याधरों का देश है। यह उद्यान चन्द्रप्रभा का है। हम इस उद्यान की रक्षा करते हैं। हम ये फूल उन्हीं के लिए तोड़ रहे हैं।" उन्होंने कहा। शक्तिदेव ने उनसे, उसको अपने मालकिन के पास ले जाने के लिए कहा। वे मान गईं।

चन्द्रप्रभा के घर में मणि स्तम्भ और सोने की दीवारें थीं। उसको दूर देखते ही चन्द्रप्रभा यूँ उठकर चलने लगी, जैसे वह आकर्षित कर रहा हो। उसने पूछा—"आप कौन हैं? इस नगर में, मानवों का आना निषिद्ध है, यहाँ कैसे आये?"

शक्तिदेव ने बिना कुछ छुपाये, जो बात जैसी थी वैसी बता दी। उसने कहा कि कनकरेखा नाम की राजकुमारी से शादी करने के लिए, वह कनकपुरी देखने आया था। चन्द्रप्रभा ने एकान्त में उनको अपना बृत्तान्त यूँ सुनाया।

शशिखण्ड नाम के विद्याधर राजा के चार लड़कियाँ थीं। चन्द्रप्रभा सबसे बड़ी थी। चन्द्ररेखा, शशिरेखा, शशिप्रभा उसकी छोटी बहिनें थीं। जब वे बड़ी हो गईं, तो चन्द्रप्रभा की तीनों बहिनें मन्दाकिनी नदी में स्नान करने गईं। वहाँ एक मुनि को देखा। यौवन के गर्व में उन्होंने उस पर पानी छिड़का। उस मुनि ने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि वे तीनों मानव जन्म लें।

यह सुन विद्याधर राजा, उस मुनि के पास गया। उसे मनाया और उससे प्रार्थना की कि उनके शाप की अवधि भिन्न-भिन्न हो और उनको पूर्व जन्म का ज्ञान रहे। मुनि इसके लिए मान गया। उन तीनों के मानव जन्म लेने के बाद, विद्याधर राजा को जीवन से वैराग्य हो गया। कनकपुरी चन्द्रप्रभा को सौंपकर, वह स्वयं वनवास के लिए चला गया।

इसके बाद, चन्द्रप्रभा को स्वप्न में अम्बिका दिखाई दी। उसने कहा—"तुम्हारा पति मानव होगा।" इस स्वप्न पर विश्वास करके, उसने किसी विद्याधर से विवाह न किया। कन्या ही रह गई।

"अब आप आये हैं, इसलिए मैं आपसे शादी करूँगी। चतुर्दशी के दिन, प्रमुख विद्याधर वृषभगिरि पर आकर, वहाँ शिव की अर्चना करेंगे। मेरे पिता भी उस दिन वहाँ पहुँचेंगे। मैं वहाँ जाकर, उनकी अनुमति प्राप्त कर, तुरत वापिस आकर

उत्तरकाण्ड

अगले दिन राम सभा में थे कि कोई कुत्ता बाहर आकर भौंका। लक्ष्मण यह जानकर कि वह कुत्ता राम से कोई फरियाद करना चाहता था, राम की अनुमति पर उसको सभा में ले गया।

कुत्ते को, जिसके सिर पर जबर्दस्त चोट लगी हुई थी, देखकर राम ने कहा—"तुम अपने कष्ट के बारे में निर्भय होकर बताओ।"

"सर्वार्थसिद्धि नाम के भिक्षु ने मेरा सिर तोड़ दिया है। मैंने उसका कुछ नहीं बिगाड़ा था।" कुत्ते ने कहा। राम ने तुरत उस भिक्षु को बुलाकर पूछा—"तुमने इस कुत्ते का सिर क्यों तोड़ा? इसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

"राजा, मैं भिक्षा के लिए घर घर घूम रहा था। मुझे कहीं कोई भीख नहीं मिली। उस हालत में यह कुत्ता मेरे रास्ते में आया। मैंने इसे बहुत मना किया। पर यह माना नहीं। यह सच है कि मै अपना गुस्सा काबू में न रख सका और मैंने उसके सिर पर मार दिया। इसका जो भी कुछ दण्ड है मुझे दीजिये।" सर्वार्थसिद्धि ने कहा।

राम ने सभासदों से पूछा कि उसको कैसा दण्ड दिया जाना अच्छा होगा।

सभा में बहुत से पण्डित थे, पर किसी ने भी सीधा जवाब न दिया।

तब कुत्ते ने राम से कहा—"राम, इसको जो दण्ड मै बताऊं, वह दो। कालंभर नामक स्थल में इसको कुलपति का काम दो।" राम ने उसको वह काम दिया और हाथी पर सवार करके उसे भेज दिया। भिक्षु भी बड़ा प्रसन्न हो चला गया।

उसके चले जाने के बाद, राम और मन्त्रियों ने उस कुत्ते से पूछा—"इस भिक्षु को तुमने इस प्रकार का दण्ड क्यों दिलवाया? इसका अवश्य कोई कारण है?"

"मैने पिछले जन्म में वही काम किया था। तब मुझे सुन्दर भोजन, दास दासी, सब कुछ मिले हुए थे। मै दयालु, विनयशील, चरित्रवान के रूप में प्रसिद्ध था। देवताओं और ब्राह्मणों की मैने पूजा की फिर भी चूंकि मै उस पद पर था, इसलिए मुझ को यह हीन जन्म लेना पड़ा। महाकोपी भिक्षु जब वह काम करेगा, तो जन्म जन्मान्तर में नरक में सड़ेगा।" कुत्ते ने कहा।

कुत्ते के चले जाने के बाद, एक उल्लू और गिद्ध में झगड़ा हुआ और वे राम के पास फैसले के लिए आये। एक जंगल में एक घर था, दोनों पक्षी यह कहकर झगड़ने लगे कि वह घर उसका था। यह निर्धारित करने के लिए कि वह घर किसका था, राम पुष्पक विमान में अपने मन्त्रियों के साथ सवार होकर, उस जगह आये जहां वह घर था।

"इस घर को तुमने कब बनाया था?" राम ने गिद्ध से पूछा।

"भूमि में जब मनुष्य पैदा हुए तब मैने यह अपना घर बनवाया था। यह मेरा ही घर है।" गिद्ध ने कहा।

तुरत उल्लू ने कहा—"राम, जब पृथ्वी पर पेड़ पैदा हुए तभी मैंने यह घर बनाया था।"

तुरत राम के मन्त्रियों ने निर्णय किया कि वह घर उल्लू का ही था, चूँकि पृथ्वी पर पहिले वृक्ष आये थे। राम ने गिद्ध का दण्ड देने की सोची।"

तब इस प्रकार आकाशवाणी हुई।

"राम इस शापग्रस्त गिद्ध को क्यों और सताते हो? यह गिद्ध ब्रह्मदत्त नाम का राजा है। इसके घर गौतम अतिथि बनकर आये। राजा ने स्वयं गौतम का स्वागत किया। गौतम ब्रह्मदत्त का आतिथ्य स्वीकार कर रहे थे कि एक दिन उनके भोजन में, कहीं माँस का टुकड़ा आ गया। यह देख गौतम क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने शाप दिया कि ब्रह्मदत्त गिद्ध हो जाये। गौतम ने यह भी कहा कि ईक्ष्वाकु वंश में पैदा होनेवाले राम जब उसको छुयेंगे, तब वह शाप-विमुक्त हो जायेगा।"

यह सुनकर राम ने उस गिद्ध को छुआ। तुरत गिद्ध एक दिव्य पुरुष बन गया। वह पुरुष राम को अपनी कृतज्ञता दिखाकर चला गया।

यमुना तट के वासी सौ से अधिक मुनि राम के दर्शनार्थ एक दिन आये। राम ने उनके लाये हुए फलों आदि के उपहारों को स्वीकार किया, उनको आसन दिया और पूछा कि वे किस काम पर आये थे? मुनियों ने राम को बताया, लवणासुर उनको बहुत तंग कर रहा था और वे चाहते थे कि राम उसके उत्पात से उनको बचायें।

यह लवणासुर मधुव राक्षस का लड़का था। मधुव ने रुद्र की बहुत समय तक तपस्या की और उसको सन्तुष्ट किया।

मधुव उसको अच्छे मार्ग पर न ला सका। मधुव ने वरुण लोक जाते हुए शिव के दिये हुए त्रिशूल को लवण को दे दिया। लवण उसकी अद्भुत शक्ति से परिचित था ही इसलिए वह और उद्धत हो गया। मुनियों को सताने लगा।

मुनियों की बातें सुनकर राम ने उनसे कहा—"लवणासुर को मैं मरवा दूँगा। आप लोग निश्चिन्त रहें।" इसके बाद उन्होंने अपने भाइयों को देखकर पूछा—"लवणासुर को मारने का काम कौन करेगा?"

भरत ने कहा कि वह वह काम करेगा। पर शत्रुघ्न ने कहा कि वह वह काम करेगा। उसने कहा कि उसके होते भरत का कष्ट उठाना अच्छा न था, जो कुछ कष्ट उसको उठाने थे, भरत ने उनको पहिले ही नन्दिग्राम में रहते झेल लिया था।

राम इसके लिए मान गये। उन्होंने शत्रुघ्न को मधुपुर का राजा नियुक्त करने की व्यवस्था की। एक राजा के मर जाने पर, तुरत उसका राज्य भार उठाने के लिए कोई एक और होना चाहिये। शत्रुघ्न के राज्याभिषेक उत्सव समाप्त होते ही, राम ने

तब रुद्र ने अपने त्रिशूल में से एक और त्रिशूल बनाकर उसको देते हुए कहा—"यह जब तक तुम्हारे साथ है, तब तक तुम्हें कोई नहीं जीत सकता!" फिर मधुव ने शिव से प्रार्थना की कि यह त्रिशूल हमेशा उसी के वंश में सुरक्षित रहे।" "यह त्रिशूल तेरे बाद, तेरे लड़के के पास ही रहेगा। उसके बाद नहीं रहेगा।" शिव ने कहा। इस मधुव ने रिश्ते की रावण की छोटी बहिन कुम्भीनस से विवाह किया। उनके लवण पैदा हुआ। वह छुटपन से ही महा पापी था।

उसको एक बाण देते हुए कहा—"इस बाण ने मधुकैटभ को मारा है। इसका मैंने रावण पर भी उपयोग न किया था। इससे तुम लवणासुर को मारो। एक और बात। लवण के पास शिव के त्रिशूल-सा एक त्रिशूल है। जब तक वह उसके हाथ में है, तब तक उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। लवण अपना त्रिशूल अपने घर में ही रखता है। इसलिए तुम ऐसा करना, जब वह नगर छोड़कर कहीं गया हुआ हो, तुम नगर को घेर लेना। जब वह वापिस आये, तो नगर के द्वार पर ही उससे मुकाबला करना और उसको मार देना। किसी भी परिस्थिति में वह नगर के अन्दर न जाये और त्रिशूल उसके हाथ में न आने पाये।"

यही नहीं, राम ने शत्रुघ्न से कहा कि वह पहिले अपनी सेना भेज दे और बाद में अकेला जाये। लवण को यह न पता लगे कि कोई उसे मारने आ रहा था। ग्रीष्म ऋतु में सेनाओं को गंगा पार करके, उस तरफ़ पड़ाव करना चाहिये। शत्रुघ्न वर्षा के आरम्भ में धनुष बाण लेकर जाये और लवणासुर को मारे।

तदनुसार शत्रुघ्न ने पहिले अपनी सेना भेज दी। एक मास बाद वह स्वयं निकला। रास्ते में दो दिन के लिए वह वाल्मीकी आश्रम में रहा। वाल्मीकी ने उसको आतिथ्य दिया। फिर उन्होंने कहा कि कभी वह आश्रम रघुवंशवालों का ही था। उन्होंने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

रघुवंश में कभी सुदास थे। उनका लड़का वीरसह था। छुटपन में ही जब वह शिकार खेलने गया, तो उसने दो राक्षसों को देखा, वे राक्षस शेर के रूप में इधर उधर घूमते और जानवरों को खाया

करते। उन्होंने सारा जंगल ही मानों निर्जीव-सा कर दिया। कहीं कोई जानवर न रहा। यह देख बीरसह को बड़ा गुस्सा आया। उसने उन राक्षसों को देखते ही उनमें से एक को मार दिया। तब दूसरे ने कहा—"पापी, तुमने मेरे साथी को मार दिया। देखो तुम्हारा क्या करता हूँ?" वह तब अदृश्य हो गया।

कुछ समय बीता। उस राजा ने इसी आश्रम में एक बहुत बड़ा अश्वमेध यज्ञ किया। वशिष्ट ने वह यज्ञ किया। यज्ञ पूरा होने को था कि वह राक्षस वशिष्ट के रूप में, राजा से बदला लेने आया। "राजा, यज्ञ पूरा हो गया है। मुझे अच्छे माँस का भोजन दो।"

राजा ने सन्तुष्ट होकर रसोइये को बुलाकर कहा—"गुरु जी के लिए यज्ञ के माँस से भोजन तैयार करो।" इस बीच राक्षस ने रसोइये का रूप धारण कर लिया। नर माँस से भोजन तैयार करके, राजा को दिखाकर उसने कहा—"देखिये, यज्ञ के माँस से मैंने कितना अच्छा भोजन बनवाया है!" राजा ने अपनी मन्त्री से वह नरमाँस परोसवाया। वशिष्ट ने यह देखकर कि उसे नरमाँस दिया गया था क्रुद्ध होकर कहा—"तुम नरभक्षक हो जाओ।" राजा को उन्होंने शाप दिया। राजा को गुस्सा आया। उसने भी वशिष्ट को शाप देने के लिए पानी उठाया। पर इससे पहिले कि वह शाप देता मन्त्री ने रोककर कहा—"वे हमारे लिए देवतुल्य हैं। आप उनको शाप न दीजिये।" तब राजा ने अपने हाथ का पानी अपने पैरों पर ही डाल लिया। उस पानी के कारण, राजा के पैर कल्मशपूर्ण हो गये। तब से उसका नाम कल्मषपाद पड़ा।

बाद में वशिष्ट जान गया कि क्या बात थी। उन्होंने कहा कि कल्मषपाद पर शाप बारह वर्ष ही रहे। राजा बारह वर्ष तक नरभक्षक के रूप में जीता रहा और शाप के खतम हो जाने के बाद, वह हमेशा की तरह राज्य पालन करने लगा।

यह कथा सुनकर शत्रुघ्न अपनी पर्णशाला में जा रहा था कि उसी समय सीता ने दो जुड़वें बच्चों को जन्म दिया। यह मुनिकुमारों द्वारा सुनकर वाल्मीकी वहाँ गये। चन्द्रमा की तरह चमचमाते बच्चों को देखकर, उन्होंने बड़े का नाम कुश रखा और दूसरे का लव।

यह ठीक आधी रात के समय हुआ था। उस समय शत्रुघ्न ने सीता के पास जाकर कहा—"माँ....अहो भाग्य...." वह बड़ा खुश हुआ। अगले दिन उसने वाल्मीकी से विदा ली। पश्चिम की ओर गया। सात दिन बाद यमुना के किनारे पहुँचा। वहाँ मुनियों के आश्रम में उसने रात काट दी।

अगले दिन सवेरा होते ही शत्रुघ्न ने च्यवन महर्षि से लवणासुर के बारे में और उसके त्रिशूल के बारे में पूछा। च्यवन ने बताया कि उसने उस त्रिशूल से बहुत-से

अत्याचार किये थे। तब मान्धाता का वृत्तान्त उसने विवरण के साथ बताया।

अयोध्या के राजा युवनाश्व का लड़का मान्धाता था। महाबलवान मान्धाता ने जब भूमि के सब राजाओं को जीत लिया, तो उसने स्वर्ग को जीतने की ठानी। यह सुनकर इन्द्र आदि देवता डरे। इन्द्र का अर्धासन और देवताओं की सेवा चाहनेवाले मान्धाता से इन्द्र ने कहा—"पहिले तुम भूलोक जीत लो। तब देवलोक मैं तुम्हें दे दूँगा।"

"यह क्या? भूलोक तो मैंने पहिले ही जीत लिया है। वहाँ मेरे मुकाबले का कोई नहीं है!" मान्धाता ने कहा।

"मधुवन में लवणासुर है। क्या वह तुम्हारे आधीन है?" इन्द्र ने मान्धाता से पूछा।

मान्धाता लज्जित हुआ। सिर झुकाकर फिर भूमि पर आया। वह सेना के साथ लवण को हराने निकला। दूत को भेजकर उसने लवणासुर से उसका आधिपत्य स्वीकार करने के लिए कहा। लवणासुर उस दूत को पकड़कर खा गया।

जब बहुत समय तक दूत वापिस न आया, मान्धाता ने लवण से युद्ध छेड़ दिया। लवण मान्धाता को देखकर हँसा। जब उसने अपने त्रिशूल का उपयोग किया, तो मान्धाता और उसकी सारी सेना भस्म हो गई।

च्यवन ने यह बात सुनकर शत्रुघ्न से कहा—"तुम उस समय उसको मारने का प्रयत्न करना, जब उसके हाथ में त्रिशूल न हो। कल ही तुम यह काम कर सकोगे।" वह रात उन्होंने बातों बातों में काट दी।

रतिदेवी की कथा

पहिले सूर्य आज से बहुत बड़ा था। सूर्य की किरणें भी बड़ी तेज़ होती थीं, सब लोकों को वे जला देती थीं।

सूर्य की तीव्रता को घटाने के लिए, ब्रह्मा ने विश्वकर्मा से कहा। विश्वकर्मा ने सूर्य को तराश कर कम किया और लोकों को बचा दिया। सूर्य से गिरे हुए कणों से विश्वकर्मा ने चक्रायुध बनाया और उसे महाविष्णु को सौंप दिया। विष्णु उसे पाकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ।

महाविष्णु की विश्वकला नाम की एक मानस पुत्री थी। विष्णु के नाभि कमल से जब ब्रह्मा पैदा हुए विष्णु के मानस पद्म से विश्वकला पैदा हुई। वह कला की अधिष्ठात्री देवी है।

विष्णु ने यह सोचकर कि उसकी लड़की के लिए विश्वकर्मा उपयुक्त वर था, उसका विश्वकला के साथ विवाह कर दिया। विश्वकर्मा, विश्वकला के साथ गृहस्थी निभाता, बड़ा खुश था।

इतने में शिव और इन्द्र ने भी विश्वकर्मा से उनके लिए भी आयुध बनाकर देने के लिए कहा। उनकी इच्छा पूरी करना भी उसका कर्तव्य हो गया। यही नहीं, सूर्य का चूरा अभी बहुत बाकी रह गया था। उससे विश्वकर्मा ने, शिव को त्रिशूल बनाकर दिया और इन्द्र के लिए वज्र बनाना शुरु किया।

विश्वकला अभी गार्हस्थ्य से उकताई नहीं थी। अपने पति को हमेशा, अस्त्र के निर्माण में लगा देख, वह नाखुश हो उठी। यही नहीं, वह न चाहती थी कि क्यों वह उनको वैसे अस्त्र बनाकर दे जो

उसके पिता को दिये हुए अस्त्रों के समान हों।

नाराज़ होकर विश्वकला, अपने माइके वैकुण्ठ चली गई और विष्णु से अपने पति के बारे में शिकायत की। विष्णु ने उसकी शिकायत सुनकर कुछ न कहा, बस वह मुस्करा दिया।

विश्वकला के चले जाने के बाद, विश्वकर्मा पत्नी के वियोग में, तपने लगा। उसने अपनी कला और शिल्प शक्ति से, विश्वकला की एक प्रतिमा बनाई और उसके साथ विनोद करता, अपना सारा समय बिताने लगा।

एक बार ब्रह्मा, विश्वकर्मा के पास किसी काम पर आया। विश्वकर्मा को, विश्वकला की मूर्ति के सामने घुटने टेककर, फिर उसका आलिंगन करके, तन्मयता में आँखें मूँदे देखा। यह देख ब्रह्मा को बड़ा गुस्सा आया। वह झट मुड़ा और मुड़ते समय, उसके कमण्डल से पानी छलका और उस प्रतिमा पर पड़ा। तुरत उस प्रतिमा में प्राण आ गये।

विश्वकर्मा ने आँखें जो खोलीं, तो उसने विश्वकला को सप्राण देखा। यह जान कि वह माइके से आ गई थी, वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसे ब्रह्मा के आने, जाने के बारे

में बिल्कुल न मालूम था। यही नहीं, वह यह भी बिल्कुल भूल गया था कि उसने कोई प्रतिमा बनाई थी।

इधर विश्वकर्मा, पहिले से अधिक प्रतिमा पत्नी को प्रेम करने लगा। कुछ दिन बाद प्रतिमा पत्नी गर्भवती हुई। होते होते उसका प्रसव काल आया।

कलहप्रिय नारद को अच्छा मौका मिला। वह विष्णु के पास गया। इधर उधर की गप्प मारकर कहा—"हाँ, आप का दामाद अब पिता होने जा रहा है न? अब आपको सपरिवार जाकर नाते, या नाति का नामकरण संस्कार आदि करवाने होंगे शायद!"

पास ही खड़ी विश्वकला ने जब ये बातें सुनीं, तो वह हका बका रह गई और नारद के सामने आयी।

उसकी ओर नारद ने आश्चर्य से देखा, मानों वह कोई अपरिचित हो।

विश्वकला फिर विष्णु की ओर देखने लगी, मानों पूछ रही हो, आखिर इस मुनि का इरादा क्या है?

विष्णु ने भी उन दोनों की ओर यूँ देखा जैसे कह रहा हो—"मुझे क्या

मालूम !" यह देख नारद धीमे से खिसक गया।

नारद की बातें सुनकर नाराज़ होकर विश्वकला अपने पति के पास गई। जब वह पहुँची, तो प्रतिमा विश्वकला घर के सामने आँगन में फूलों को पानी दे रही थी।

"तुम मेरी जैसी हो, कौन हो तुम !" विश्वकला को जोर से चिल्लाता देख, विश्वकर्मा जो अपने काम में अन्दर मस्त था, बाहर आया दोनों विश्वकलाओं को देखकर, उसे बड़ा अचरज हुआ। "इनमें असली रह जाये और नकली पत्थर हो जाये।" तुरत प्रतिमा विश्वकला फिर प्रतिमा हो गई।

तब भी विश्वकला का गुस्सा न गया। उसे प्रतिमा विश्वकला पर बड़ा गुस्सा आया, वह अन्दर गई और एक बड़ा हथौड़ा लाकर उस पर मारा। मूर्ति टूट गई और उसमें से रत्न-सी एक लड़की रोती नीचे जा गिरी।

तुरत विश्वकला का गुस्सा ठंडा हो गया और उसमें मातृ प्रेम जग उठा। उसने शिशु को गले लगा लिया। जब वे दोनों उस लड़की को देखकर खुश हो रहे थे, तो लक्ष्मी नारायण अपने लड़के कामदेव को साथ लेकर उस तरफ़ आये। लक्ष्मी उस लड़की को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई और उसने कहा कि वह अपने लड़के के साथ विवाह कर देगी। विष्णु ने उस लड़की का नाम "रति" रखा।

रति जब बड़ी हुई, तो तीनों लोकों में उसके समान कोई सुन्दर न था। रति और कामदेव ने पति पत्नी होकर, शृंगार साम्राज्य पर राज्य करने सारे विश्व में संचार किया।

५४. काल्सबाड़ गुफ़ाएँ

मेक्सिको के इन अद्‌भुत गुफ़ाओं के बारे में, १९२४ में संसार को पता लगा। नीचे के चित्र की गुफ़ा की ऊँचाई ३०० फ़ीट है। लम्बाई ६२५ फ़ीट के करीब है। गहराई ४,००० फ़ीट। इसमें जो स्तम्भ की तरह दिखाई देते हैं वह कई वर्षों से जमा हुए, चूने के पत्थर हैं।

Photo by P. Krishna Kumar
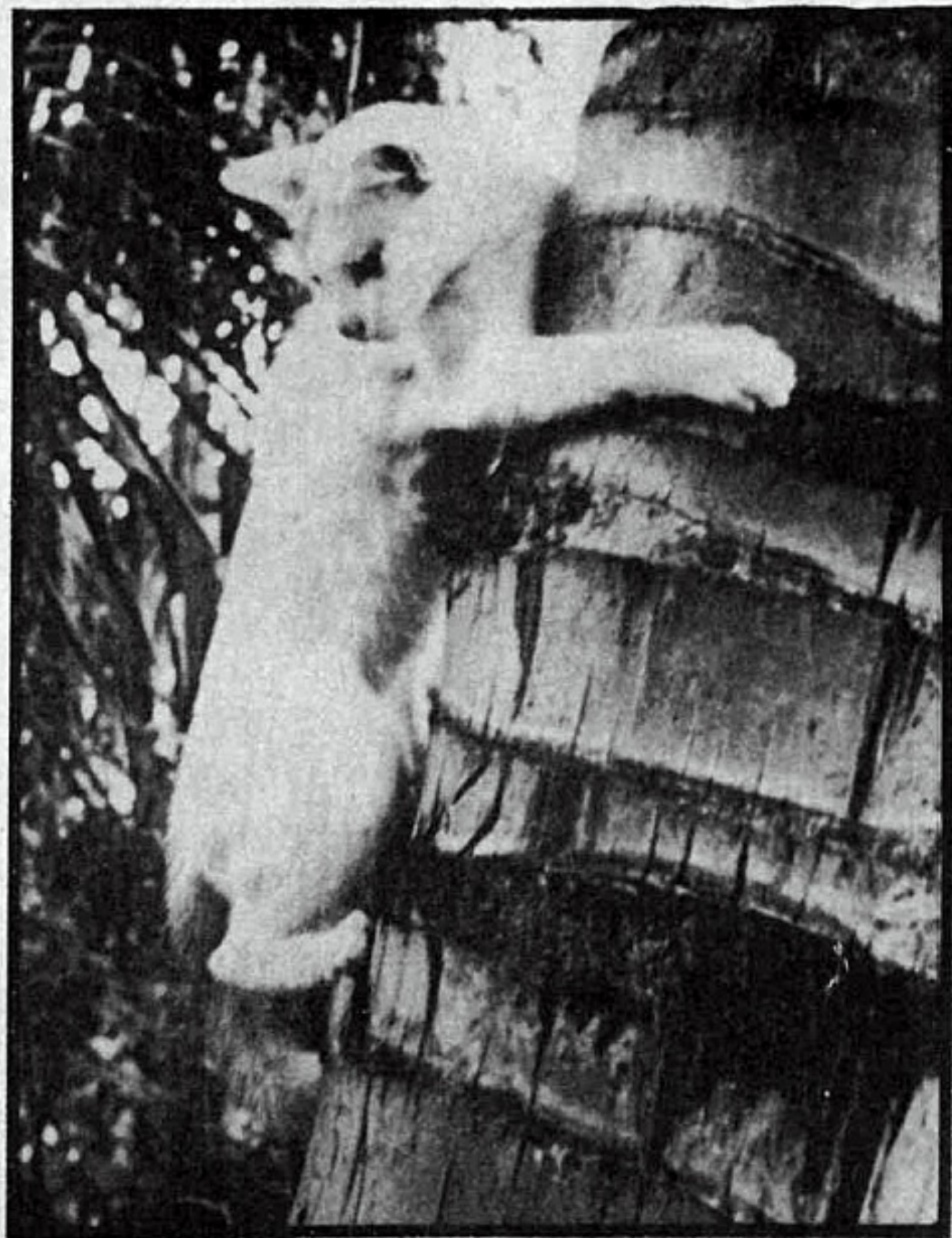
पुरस्कृत परिचयोक्ति

ऊपर चढ़ना मुझको भाता !

प्रेषक :
हरीशचन्द्र अरोड़ा - दिल्ली

Photo by C. M. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

नहीं उतरना मुझको आता !!

प्रेषक :
हरीशचन्द्र अरोड़ा - दिल्ली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अगस्त १९६६ : : पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियां पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ जून १९६६ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

जून – प्रतियोगिता – फल

जून के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **ऊपर चढ़ना मुझको भाता!**
दूसरा फ़ोटो: **नहीं उतरना मुझको आता!!**

प्रेषक: **हरीशचन्द्र अरोड़ा,**
डी ४/११, कृष्णनगर, दिल्ली-३१.

Printed by B. NAGI REDDI at The B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'